अनुरागसागर प्रारंभ

सत्यसुकृत, आदिअदली, अजर; अचिन्त पुरुष, मुनीन्द्र,
करुणामयकबीर सुरतियोगसन्तायन, धनीधर्मदास,
चूरामणिनाम, सुदर्शन नाम, कुलपति नाम प्रमोध,
गुरबालापीर, केवल नाम, अमोलनाम, सुरति,
सनेही नाम, हक्कनाम, पाकनाम; प्रगट नाम,
धीरजनाम, उग्रनाम, साहबकी दया,
वंशव्यालीसकी दया ।

★

मंगलाचरण । छन्द हरिगीतिका

प्रथमवन्दोंसतिगुरुचरण जिन, अगमगम्यलखाइया ॥
गुरुज्ञान दीपप्रकाशकरि पट, खोलिदरशदिखाइया ॥
जिहि कारणे सिद्धचापचेसो, गुरु कृपाते पाइया ॥
अकह मूरति अमिय सूरति, ताहि जाय समाइया ॥

गुरुदेव पूर्ण है

सोरठा–कृपासिंधु गुरुदेव, दीनदयालु कृपालु हैं ॥
विरले पावहिं भेव, जिन चीन्ह्या परगट तहां ॥

अधिकारी कौन है ? छन्द

कोई बूझई जन जौहरी जो, शब्दकी पारख करैं ॥
चितलाय सुनहिं सिखावनो, हितजाके हिरदय धरैं ॥

तम मोह मोसम ज्ञान रवि,जब प्रगट हो तबसूझई॥
कहत हूं अनुरागसागर,संत कोइ कोइ बूझई ॥ २॥

विना अनुराग वस्तुको पा नहीं सकते

सोरठा–कोइ इकसन्त सुजान, जो मम शब्द बिचारई॥
पावै पद निर्बान, बसत जासु अनुराग उर॥२॥

धर्मदास वचन–अनुरागीके लक्षण विषय प्रश्न

है सतगुरु विनवौं कर जोरी। यह संशय मेटो प्रभु मेरी ॥
जाके चित अनुराग समाना। ताकर कहो कवन सहिदाना॥
अनुरागी कैसे लखि परई। बिन अनुराग जीव नहिं तरई॥
सो अनुराग प्रभु मोहिं बताऊ। देइं दृष्टान्त भले समझाऊ ॥

सतगुरुवचन–अनुरागीके दृष्टान्त

धर्मदास परखहु चितलाई। अनुरागी लच्छ कहुं समुझाई॥

मृगाका दृष्टान्त

जैसे मृगा नाद सुनि धावै। मगन होय व्याधा ढिग आवै॥
चित कछु संक न आवे ताही। देत सीस सो नाहि डराही॥
सुनि सुनि नाद सीस तिन दीन्हा। ऐसे अनुरागी कहँ चीन्हा ॥

पतंगका दृष्टान्त

औ पतंगको जैसो भाऊ। ऐसे अनुरागी उर आऊ ॥

सतीका दृष्टान्त

और लच्छ सुनियो धर्मदासा। सतगुरु शब्द करो प्रकाशा॥
जरत नारि ज्यों भूतपति संगा। तनिको जरत न मोरत अंगा॥
तजै सुगृह धन धाम सुहेली। पिय विरहिन उठि चलै अकेली॥
सुत लै लोगन आगे कीन्हा। बहुत मोह ताकहँ पुनि कीन्हा॥
बालक दुर्बल तोहि विनु मरिहै। घर भोसुन्नकाहि त्रिधिकरि है॥
बहु संपति तुमरे घर अहई। पलट चलहुगृह अस बस कहई॥
ताके चित कछु व्यापे नाहीं। पिय अनुराग वसै हियमाहीं॥

छन्द

तेहिं बहुत कहिसमुझावहीं,नहिंनारिसमुझतसोधनी॥
नहिं काम है धन धाम सों,कछु मोहितो ऐसीबनी॥
जग जीवना दिन चारि है,कोइ नाहिं साथी अंतको॥
यह समुझि देख्यो ऐ सखी,ताते गह्यो पदकंतको॥३॥
सोरठा–लिये कियाकरमाह, जाय सरा ऊपर चढ़ी॥
गोद लियो निज नाह, रामनामकहते जरी॥३॥

तत्त्वानुरागी के लक्षण

धर्म ! येह अनुरागी बानी । तुम तत देख कहूं बिलछानी
ऐसे जो नामहिं लौं लावे । कुलपरिवार सबहि विसरावे॥
नारी सुतको मोह न आने । जीवन जनम सपन केरि जाने॥
जगमें जीवन थोरो भाई । अन्त समय सो नाहिं सहाई॥
बहुत पियारि नारि जगमाहीं । मातु पितहु जाहि सर नाहीं॥
तेहि कारण नर सीस जु देही । अन्त समय सो नाहिं सनेही॥
निज स्वारथ कहँ रोदन करई । तुरतहि नैहरको चित धरई॥
सुत परिजनधन सपनसनेही । सत्यनाम गहु निजमति एही॥
निजतनुसमप्रिय और न आना।सो तन संग न चलत निदाना॥

कालसे कौन छुड़ा सकता है ?

ऐसा कोइ न दीखे भाई । अन्त समयमें लेइ छुड़ाई॥
अहै एक सो कहौं बखानी । जेहि अनुराग होय सों मानी॥
सत गुरु आदि छुड़ावन हारा। निश्चय मानो कहा हमारा॥

सद्गुरु क्या करता है ?

कालहिं जीत हंस ले जाहीं।अविचलदेश पुरुष जहँ आहीं॥
जहां जाय सुख होय अपारा। बहुरि न आवै यहि संसारा॥

अविचल देशको कौन पहुँच सकता है ? छन्द

बिसवास कर मनवचनको, तब चढे सतकी राहहो॥
ज्यों सूरमा रनमें धसे, फिर पाछ चितवन नाहहो॥
सती शूरा भाव लखिके, संत सो मग धारिये॥
मृतके भाव विचारगुरुगम, काल कष्ट निवारिये॥

अधिकारीकी दुर्लभता

सोरठा—कोइक, शूर जीव, जो ऐसी करनी करै॥
ताहि मिलगो पीव, कहे, कबीर विचारिके॥४॥

धर्मदास—वचन मृतक किसे कहते हैं

मृतक भाव प्रभु कहो बुझाई। जाते मनकी तपनि नसाई॥
केहि विधिमरत कहो यह जीवन। कहो विलोय नाथ अमृतघन॥

कबीरवचन—मृतकके दृष्टांत

धर्मदास यह कठिन कहानी। गुरुगम ते कोइ विरले जानी॥

भृङ्गीका दृष्टांत

मृतक होयके खोजहिं सन्ता। शब्दविचारि गहैं मगु अन्ता॥
जैसे भृङ्ग कीटके पासा। कीटहिंगहिपुरुगम परगासा॥
शब्द घातकर महितिहि डारे। भृङ्गी शब्द कीट जो धारे॥
तब लैगो भृङ्गी निज गेहा। स्वाती देह कीन्हो समदेहा॥
भृङ्गी शब्द कीट जो माना। वरण फेर आपन करजाना॥
बिरलाकीट जो होय सुखदाई। प्रथम अवाज गहे चितलाई॥
कोइ दूजे कोइ तीजे मानै। तनमनरहित शब्दहित जानै॥
भृङ्गी शब्द कीट ना गहई। तौ पुनि कीट आसरे रहई॥
धर्मदास यह कीट को भेवा। यहि मति शिष्य गहे गुरुदेवा॥

भृङ्गीभावकी प्राप्ति कैसे होती है छन्द

भृंगि मति दिढक गहे तो, करो निजसमओहि हो ॥
दुतियाभाव न चित व्यापे, सो लहे जिव मोहिहो ॥
गुरु शब्द निश्चय सत्यमाने, भृंगि मत तब पावई॥
तजि सकल आसा शब्द बासा, काग हंस कहावई॥

हंस कौन है ?

सोरठा—तज कागेकी चाल, सत्य शब्द गहि हंसहो॥
मुकता चुगे रसाल, पुरुष पच्छ गुरु मग गवन ॥५॥

मृतकके और दृष्टांत

सुनहु संत यह मृतक सुभाऊ। विरला जीवपीव मग धाऊ॥
औरै सुनहु मृतकका भेवा। मृतक होय सतगुरु पद सेवा॥
मृतक छोह निभाव उरधारे। छोह निभावहि जीव उबारे॥

पृथ्वी का दृष्टांत

जस पृथ्वीके गंजन होई। चित अनुमान गहे गुणसोई॥
कोई चन्दन कोई विष्ठा डारे। कोई कोई किरषी अनुसारे॥
गुण औगुण तिन समकर जाना। महाविरोध अधिक सुखमाना॥

ऊखका दृष्टान्त

औरो मृतक भाव सुनि लेहू। निरखिपरखिगुरुमगुपगु देहू॥
जैसे ऊख किसान बनावे। रती रती कर देह कटावे॥
कोल्हू महँ पुनि आप पिरावे। पुनि कड़ाहमें आप उँटावे॥
जिन तनु दाहे गुड़ तब होई। बहुरि ताव दे खांड विलोई॥
ताहू माहिं ताव पुनि दीन्हा। चीनी तबे कहावन लीन्हा॥
चीनी होय बहुरि तन जारा। ताते मिसरी है अनुसारा॥
मिसरीते जब कंद कहावा। कहे कबीर सबके मन भावा॥
यही विधिते जो शिष सहई। गुरु कृपा सहजे भव तरई॥

मृतकभाव कौन धारण कर सकता है ? छन्द

मिरतक भाव है कठिन धर्मनि, लहे विरलशूरहो ॥
कादर सुनतेहि तनमन दहै, पाछे न चितवतकूरहो ॥
ऐसे शिष्य आप सम्हारे, नाव सही गुरुज्ञानको ॥
लहै भेदी भेद निश्चय, जाय दीप अमानको ॥६॥

मृतक ही साधु होता है

सोरठा—मृतक हो सो साधु, सो सतगुरुको पावई ॥
मेटे सकल उपाध, तासु देव आसा करें ॥ ६ ॥

साधु किसे कहते हैं

साधूमार्ग कठिन धर्मदासा । रहनी रहे सो साधु सुबासा ॥
पांचों इन्द्री सम करि राखे । नाम अमीरसनिशिदिन चाखे ॥

चक्षुर्वशीकरण

प्रथमहिं चक्षु इन्द्री कहँ साधे । गुरु गम पंथ नाम अवराधे ॥
सुन्दर रूप चक्षुकी पूजा । रूप कुरूप न भावे दूजा ॥
रूप कुरूपहिं सम करजाने । दरस विदेह सदा सुख माने ॥

श्रवणवशीकरण

इन्द्री श्रवण वचन शुभ चाहै । उत्कट वचनसुनत चित दाहै ॥
बोल कुबोल दोउ सह लेखै । हृदय शुद्ध गुरुज्ञान विशेखै ॥

नासिकावशीकरण

नासिका इन्द्री बास अधीना । यहि सम राखे संत प्रवीना ॥

जिह्वावशीकरण

जिभ्या इन्द्री चाहै स्वादा । खट्टा मीठा मधुर सवादा ॥
सहज भावमें जो कछु आवे । रूखा फीका नहिं विलगावे ॥
जो कोई पंचामृत लै आवे । ताहि देख नहिं हरष चढ़ावे ॥
तजे न रूखा साग अलूना । अधिक प्रेमसों पावैं दूना ॥

शिश्नवशीकरण

इन्द्री दुष्ट महा अपराधी । कुटिलकाम होई विरलेसाधी ॥
कामिनि रूप कालकी खानी । तजहु तासु सँग हो गुरुज्ञानी ॥

कामवशीकरण

जबही काम उमंग तन आवै । ताहि समय जो आप जुगावै ॥
शब्द विदेह सुरत लै राखे । गहिमन मौन नामरसचाखे ॥
जब निहतत्त्वमें जाय समाई । तबहीं काम रहै मुरझाई ॥

कामदेव लुटेरा है । छन्द

काम परबल अति भयंकर, महा दारुण काल हो ॥
सुरदेव मुनिगणयक्षगंधर्व, सबहि कीन्ह बिलास हो ॥
सबहिं लूटे बिरल छूटे, ज्ञान गुण निज दृढ गहे ॥
गुरुज्ञान दीप समीप सतगुरु, भेदमारग तिन लहे ॥७॥

कामलुटेरेसे बचने का उपाय

सोरठा-दीपक ज्ञान प्रकाश, भवन उजेरा करि रहो ॥
सतगुरुशब्द बिलास, भाज चोर अँजोरा जब ॥७॥

अनलपक्षिका दृष्टान्त

गुरू कृपासों साधु कहावै । अनलपच्छ ह्वै लोक सिधावै ॥
धर्मदास यह परखो बानी । अनलपच्छ गम कहों बखानी ॥
अनलपच्छ जो रहै अकाशा । निशि दिन रहै पवनकी आशा ॥
दृष्टिभाव तिनरति विधिठानी । यहविधिगरभ रहैतिहिजानी ॥
अंडप्रकाश कीन्ह पुनि तहवां । निराधार आलंबहिं जहवां ॥
मारग माहिं पुष्ट भो अंडा । मारग माहिं विरह नौखण्डा ॥
मारग माहिं चक्षु तिन पावा । मारग माहिं पंख पर भावा ॥
महि ढिग आवा सुधि भइताहीं । इहां मोर आश्रम नहिं आहीं ॥
सुरति सम्हार चले पुनि तहवां । मात पिताको आश्रम जहवां ॥

अनलपच्छ तेहि लेन न आवैं । उलटचीन्हनिजघरहि सिधावैं॥
बहु पंछी जग माहिं रहावैं । अनलपच्छ सम नाहिं कहावैं॥
अनलपच्छजसपच्छिन माहीं। अस विरले जिव नाम समांहीं॥
यहि विधि जो जिव चेतै भाई। मेटि काल सतलोक सिधाई ॥

साधु अनलपक्षी समान कब होता है ? छन्द

निरालंब अलंब सतगुरु, एक आसा नामकी ॥
गुरुचरणलीनअधीननिशिदिन, चाहनहिंधनधामकी
सुतनारि सकल विसारिविषया, चरणगुरुदृढकैगहे ॥

ऐसे साधुको गुरु

सतगुरुकृपादुखदुसहनाशै, धाम अविचलसो लहे ॥

अविचल धामकी प्राप्ति किससे होती है ?

सो०-मनवचक्रमगुरुध्यान, गुरुआज्ञानिरखत चले॥
देहि मुक्ति गुरु दान, नाम विदेह लखायकै ॥ ८ ॥

नाम ध्यान माहात्म्य

जबलग ध्यान विदेह न आवे । तबलगजिवभवभटका खावे॥
ध्यान विदेह औ नाम विदेहा। दोइ लख पावे मिटे संदेहा ॥
छन इक ध्यान विदेह समाई । ताकी महिमा वरणि न जाई॥
काया नाम सबै गोहरावे । नाम विदेह विरले कोई पावे॥
जो युग चार रहे कोई कासी । सार शब्द विन यमपुरवासी॥
नीमषार बद्री परधामा । गया द्वारिका प्राग अस्नाना ॥
अडसठ तीरथ भूपरिकरमा । सार शब्द विन मिटै न भरमा॥
कहँलग कहों नाम परभाऊ । जा सुमिरे जमत्रास नसाऊ॥

नाम पानेवालेको क्या मिलता है

सार नाम सतगुरुसो पावे । नाम डोर रहि लोक सिधावे॥
धर्मराय ताको सिर नावे । जो हंसा निःतत्व समावे ॥

सार शब्द क्या है

सार शब्द विदेह स्वरूपा। निअच्छर वहि रूप अनूपा॥
तत्त्व प्रकृतिभाव सब देहा। सार शब्द नितत्त्व विदेहा॥
कहन सुननको शब्द चौधारा। सार शब्दसों जीव उबारा॥
पुरुष सु नाम सार परवाना। सुमिरण पुरुष सार सहिदाना॥
बिन रसनाके जाय समाई। तासों काल रहे मुरझाई॥
सूच्छम सहज पन्थ है पूरा। तापर चढो रहे जन सूरा॥
नहिं वहँ शब्द न सुमरा जापा। पूरन वस्तु काल दिख दापा॥
हंस भार तुम्हरे शिर दीना। तुमको कहों शब्दको चीन्हा॥
पदम अनन्त पँखुरी जाने। अजपा जाप डोर सो ताने॥
सुच्छम द्वार तहां तब परसे। अगम अगोचर सत्पथ परसे॥
अन्तरशून्य महि होय प्रकाशा। तहँवाँ आदि पुरुषको बासा॥
ताहिं चीन्ह हंस तहँ जाई। आदि सुरत तहँ लै पहुंचाई॥
आदि सुरत पुरुषको आदी। जीव सोहँगम बोलिये ताही॥
धर्मदास तुम सन्त सुजाना। परखो सारशब्द निरबाना॥

सारशब्द (नाम) जपनेकी विधि गुरुगमभेद छन्द

अजपा जाप हो सहजधुना, परखिगुरुगम डारिये॥
मन पवनथिरकर शब्दनिरखै, कर्ममनमथ मारिये॥
होत धुनि रसना विना, कर माल विन निरवारिये॥
शब्दसार विदेह निरखत, अमरलोक सिधारिये॥९॥
सोरठा-शोभा अगम अपार, कोटिभानुशशिरोमइक॥
षोडश रवि छिटकार, एकहंस उजियार तनु॥९॥

धर्मदासका आनन्दोद्गार

हे प्रभु तब चरण बलिहारी। किये सुखी सब कष्ट निवारी॥
चक्षुहीन जिमि पावे नैना। तिमि मोहि हरषसुनततव नैना॥

कबीर वचन

धर्मदास तुम अंस अंकूरी । मोहि मिलेउ कीन्हे दुख दूरी॥
जस तुम कीन्हे मोमन नेहा । तजिधनधामरु सुत पितु गेहा॥
आगेशिष्यजोअसविधिकहिहैं। गुरुचरण मननिश्चलधरिहैं ॥
गुरुके चरण प्रीत चित धारै । तन मन धन सतगुरुपर वारै॥
सोजिवमोहिंअधिक प्रिय होई। ताकहँ रोकि सकै नहिं कोई ॥
शिष्य होय सरबस नहिं वारे । हृदयकपट मुख प्रीति उचारे॥
सो जिव कैसे लोग सिधाई । बिन गुरु मिलै मोहिं नहिं पाई॥

अवीसीकर्मधनदाता

यह सब तो प्रभु आपहि कीन्हा । नहिं तो हतो मैं परम मलीना॥
करके दया प्रभु आपहिं आये। पकड़ि बांह प्रभु काल छुड़ाये॥

सृष्टिउत्पत्तिविषयप्रश्न

अब साहब मोहिं देउ बताई । अमर लोग सो कहां रहाई ॥
लोकदीप मोहिं बरनि सुनावहु । तृषनावन्तको अमी पियावहु॥
कौन द्वीप हंसको वासा । कौने द्वीप पुरुष रह वासा ॥
भोजन कौन हंस तहँ करई । और बानी कहँ पुनि उच्चरई॥
कैसे पुरुष लोग रचि राखा । द्वीपहि करकैसे अभिलाखा ॥
तीन लोक उत्पत्ती भाखो । वर्णहुसकल गोय जनि राखो॥
कालनिरंजनकेहि विधि भयऊ। कैसे षोडश सुत निर्मयऊ ॥
कैसे चार खानि बिस्तारी । कैसे जीव कालवश डारी ॥
कैसे कूर्म शेष उपराजा । कैसे मीन बराहहिं साजा ॥
त्रय देवा कौने विधि भयऊ । कैसे महि अकाश निरमयऊ॥
चन्द्र सूर्य कहु कैसे भयऊ । कैसे तारागण सब ठयऊ ॥
किहि विधि भइ शरीरकी रचना । भाषो साहब उत्पत्ति बचना॥
जाते संशय हो उच्छेदा । पाय भेद मन होय अखेदा॥

छन्द

आदि उत्पतिकहोसतगुरु, कृपाकरी निजदासको ॥
बचन सुधा सु प्रकाश कीजै,नाश हो यमत्रासको॥
एक एक विलोयवर्णहु, दास मोहि निज जानिकै॥
सत्य वक्ता सदगुरू तुम,लेब निश्चयमानिकै॥ १०॥
सो०-निश्चयबचनतुम्हार, मोहिंअधिकप्रियताहिते॥
लीला अगम अपार,धन्यभाग दर्शन दिये॥ १०॥

कबीर वचन

धर्मदास अधिकारी पाया । ताते मैं कहि भेद सुनाया ॥
अब तुम सुनहु आदिकी बीनी । भाषों उत्पति प्रलय निशानी॥

सृष्टिके आदिमें क्या था ?

तबकी बात सुनहु धर्मदासा ।जबनहिंमहिपाताल अकाशा॥
जब नहि कूर्म बराह और शेषा । जब नहिं शारदगौरिगणेशा ॥
जब नहि हते निरंजन राया । जिन जीवनकहबांधिझुलाया॥
तेतिस कोटि देवता नाहीं । और अनेक बताऊ काहीं ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश न तहिया । शास्त्र वेद पुराण न कहिया॥
तब सब रहे पुरुषके माहीं । ज्यों बट वृक्ष मध्य रह छाहीं ॥

छन्द

आदि उत्पति सुनहु धर्मनि,कोइ न जानत ताहिहो॥
सबहि भो बिस्तार पाछे, स्वास देउँ मैं काहि हो ॥
वेदचारो नाहिं जानत, सत्य पुरुष कहानियाँ ॥
वेदको तब मूल नाहीं,अकथकथा बखानियाँ॥ ११॥
सोरठा-निराकारतै वेद, आदिभेद जाने नहीं ॥
पण्डित करत उछेद, मते वेदके जग चले॥ ११॥

सृष्टिकी उत्पत्ति सतपुरुषकी रचना

सत्य पुरुष जब गुपत रहाये। कारण करण नहीं निरमाये॥
समपुट कमल रह गुप्त सनेहा। पुहुपमाहिं रह पुरुष विदेहा॥
इच्छा कीन्ह अंश उपजाये। हंसन देखि हरष बहुपाये॥
प्रथमहिं पुरुषशब्द परकाशा। दीपलोकरचि कीन्ह निवासा॥
चारि कर सिंहासन कीन्हा। तापर पुहुप दीपकर चीन्हा॥
पुरुष कला धरि बैठे जहिया। प्रगटी अगर वासना तहिया॥
सहस अठासी दीपरचि राखा। पुरुष इच्छातैं सबअभिलाखा॥
सबै द्वीप रह अगर समायी। अगर वासना बहुत सुहायी॥

सोलह सुतका प्रगट होना

दूजे शब्द भयेजुपुरुषप्रकाशा। निकसे कूर्मचरण गहि आशा॥
तीजे शब्दभयेजुपुरुष उच्चारा। ज्ञान नाम सुत उपजे सारा॥
टेकी चरण सम्मुख ह्वै रहेऊ। आज्ञा पुरुषद्वीपतिन्ह दएऊ॥
चौथे शब्द भये पुनि जबहीं। विवेकनाम सुत उपजे तबहीं॥
आप पुरुष किये द्वीपनिवासा। पंचम शब्दसो तेज परकासा॥
पांचवे शब्द जब पुरुष उच्चारा। काल निरंजन भो औतारा॥
तेज अंगते काल ह्वै आवा। ताते जीवन कह संतावा॥
जीवरा अंश पुरुषका आहीं। आदिअन्त कोउ जानत नाहीं॥
छठे शब्द पुरुष मुख भाषा। प्रगटे सहजनाम अभिलाषा॥
सतयें शब्द भयो संतोषा। दीन्हो द्वीप पुरुष परितोषा॥
अठयें शब्द पुरुष उचारा। सुरति सुभाष द्वीप बैठारा॥
नवमें शब्द आनन्द अपारा। दशयें शब्द क्षमा अनुसारा॥
ग्यारहें शब्द नाम निष्कामा। बारहें शब्द जलरंगी नामा॥
तेरहें शब्द अचिंत सुत जाने। चौदहें शब्द सुत प्रेम बखाने॥
पन्द्रहें शब्द सुत दीन दयाला। सोलहें शब्दभे धीर्यरसाला॥

सत्रहवें शब्दसुतयोगसंतायन । एक नाल षोडषसुत पायन ॥
शब्दहिते भयो सुतन अकारा । शब्दते लोक द्वीप विस्तारा ॥
अग्र अमी दिव्य अंश अहारा । द्वीप द्वीप अंशन बैठारा ॥
अंशन शोभा कला अनन्ता । होत तहां सुख सदा बसन्ता ॥
अंशन शोभा अगम अपारा । कला अनन्त को वरणै पारा ॥
सब सुत करें पुरुषको ध्याना । अमी अहार सदासुख माना ॥
याही विधि सोलह सुत भेऊ । धर्मदास तुम चितधरि लेऊ ॥

द्वीप करी को अनत शोभा, नहि बरणतसो बने ॥
अमितकल अपार अद्भुत, सुनत शोभाको गने ॥
पुरके उजियारसे सुन, सबै द्वीप अजो रहो ॥
सत पुरुषरोम प्रकाश एकहि, चन्द्र सूर्य करो रहो ॥
सो०-सतगुरुआनँधाम, शोकमोहदुःख तहँ नहीं ॥
हंसनको विश्राम, पुरुष दरश अँचवन सुध ॥१२॥

निरंजनकी तपस्या और मानसरोवर तथा शून्यकी प्राप्ति

यहिविधिबहुतदिवसगये बीती । ता पीछे ऐसी भइ रीती ॥
धरमराय अस कीन्हतमासा । सो चरित्र बूझहु धर्मदासा ॥
युग सत्तर सेवा तिन कीन्ही । इकपद ठाढ पुरुष हर्षित दीन्ही ॥
सेवा कठिन भांति तिन कीन्हा । आदिपुरुष हर्षित होय चीन्हा ॥

पुरुष वचन निरंजन प्राप्ति

पुरुष अवाज उठी तब बानी । कहा जानि तुम सेवा ठानी ॥

निरंजनवचन

कहै धरम तब सीस नवायी । देहु ठौर जहां बैठों जायी ॥
आज्ञा किये जाहु सुत तहवाँ । मानसरोवर द्वीप है जहवाँ ॥
चल्यो धरम तब मानसरोवर । बहुत हरषचितकरतकलोहर ॥

मान सरोवर आये जहिया । भये आनन्द धरमपुनि तहिया ॥
बहुरि ध्यान पुरुषको कीन्हा । सत्तर जुग सेवा चित दीन्हा ॥
यक पगु ठाढे सेवा लायी । पुरुष दयालु दया उर आयी ॥

पुरुषवचन सहजप्रति

विकस्यो!पुरुषउठयोजब बानी। बोलत बचन उठयो अधरानी ॥
जाहु सहज तुम धरमके पासा । अबकस ध्यानकीन्ह परकासा ॥
सेवा बहु कीन्हा धर्मराऊ । दियो ठौर वहि जहाँ रहाऊ ॥
तीन लोग तब पलमें दीन्हा । लखिसेवकाइ दया अस कीन्हा ॥
तीन लोक कर पायो राजू । भयो अनन्द धरम मन गाजू ॥
अबका चाहें पूछो जाई । जो कुछ कह सो देउ सुनाई ॥

सहजका निरंजनके पास जाना

चले सहज तब सील नवाई । धरमराय पहँ पहुँचे जाई ॥
कहे सहज सुनु भ्राता मोरा । सेवा पुरुष मान लइ तोरा ॥
अबका मांगहु सो कह मोही । पुरुष अवाज दीन्हा यह तोही ॥

निरजनवचन सहजप्रति

अहो सहज तुम जेठे भाई । करो पुरुष सो बिन्ती जाई ॥
इतना ठात्र न मोहि सुहाई । अब मोहि बकसि देहहु ठकुराई ॥
मोरे चित असभौ अनुरागा । देउ देश मोहि करहु सभागा ॥
कै मोहि देवलोक अधिकारा । कै मोहि देहु देश यक न्यारा ॥

सहजवचन सत्पुरुषप्रति

चले सहज सुन धर्मकी बाता । जाय पुरुषसो कहे विख्याता ॥
जो कछु धर्मराय अभिलाषी । तैसे सहज सुनाये भाषी ॥

पुरुषवचन सहजप्रति । छन्द

सुन्यो सहजके वचन, जबही पुरुष बैन उच्चारेऊ ॥
धरमसे सन्तुष्ट हैं हम, वचन मम उर धारेऊ ॥

लोक तीनों ताहि दीन्हो, शून्य देश वसावहू ॥
करहु रचना जाय तहँवा,सहज वचन सुनावहू॥१२॥
सो०–जाहु सहज तुम वेग,अस कहि आवो धर्मसो॥
दियो शून्यकर थेग, रचना रचहु बनाइके ॥ १३ ॥

निरंजनको सृष्टि रचनाका साज मिलानेका वृत्तांत

सहज वचन निरंजन प्रति

आये सहज वचन सुनावा । सत्यपुरुषजसकहिसमुझावा॥

कबीर वचन धर्मराज प्रति

सुनतहि वचन धर्म हरषाना । कछुकहर्षकछुविस्मय आना॥

निरंजनवचन सहज प्रति

कहे धर्म सुनु सहज पियारा । कैसे रचौं करौं विस्तारा ॥
पुरुष दयाल दीन्ह मोहिं राजू। जानु न भेद करों किमि काजू॥
गम्य अगम मोहे नहिं आयी । करों दया सो युक्ति बतायी॥
विन्ती करो पुरुषसों मोरी । अहो भ्रात बलिहारी तेरी ॥
किहिविधिरचूँनवखण्ड बनाई । हे भ्रात सो आज्ञा पाई ॥
मो कहँ देहु साज प्रभु सोई । जातें रचना जगत्‌की होई ॥

सहजका लोकको जाना

तबही सहज लोक पग धारा । कीन्ह दंडवत बारम्बारा ॥

पुरुषवचन सहज प्रति

अहो सहज कस इहँवा आई । सो हमसो तुम शब्द सुनाई॥

कबीर वचन धर्म दास प्रति

कहो सहज तब धर्मकी बाता ।जो कछु धर्म कही विख्याता॥
धर्मराज जस विन्ती लायी । तैसे सहज सुनायउ जायी ॥

पुरुषकी आज्ञा सहजसे

आज्ञा पुरुष दीन्ह तेहि वारा ।सुनो सहज तुम वचनहमारा॥

कूर्मके उदर आदि सब साजा। सो ले धर्म करे निजकाजा॥
विनती करे कूर्म सौ जाई। मांगि लेति तेहि माथ नवाई॥

सहज धर्मरायके निकट जाकर पुरुषकी आज्ञा सुनाना

गये सहज पुनि धर्मके पासा। आज्ञापुरुष दीन्ह परकासा॥
विनती करो कूर्मसो जाई। मांगि लेहु सीस नवाई॥
जाय कूर्म ढिग सीस नवावहु। करिहैं कृपा बहुत तव पावहु॥

निरंजनको कूर्मके पास साज लेनेको जाना

कबीरवचन धर्मदास प्रति

जलिभो धरम हरष तब बाढो। मनहिकीन ग़ुमान अतिगाढो॥
जाय कूर्मके सम्मुख भयऊ। दंडपरनाम एक नहिं कियऊ॥
अमी स्वरूप कर्म सुखदाई। तपननतनिकोअतिशितलाई॥
करि ग़ुमान देख्यो जब काला। कूर्म धीर अति है बलवाना॥
बारह पलँग कूर्म शरीरा। छै पलँग धरम बलबीरा॥
धावै चहुँ दिशि रहै रिसाई। किहिविधिलींजैउत्पति भाई॥
कीन्हो कालसीस नख घाता। उदरते निकसे पवन अघाता॥
तीन सीसके तीनहु अंशा। ब्रह्मा विष्णु महेश्वर वंशा॥
पांच तत्व धरती आकाशा। चन्द्र सूर्य उडगन रहिवासा॥
विसरचो नीर अग्नि शशिसूरा। निसरचो नभढाकनमहिथूरा॥
मीन शेष बराह महिथम्भन। पुनि पृथ्वीको भयो अरम्भन॥
छीना सीस कुर्मको जबही। चले प्रसेव ठांव पुनि तबही॥
जबही प्रसेव बुंद जल दीन्हा। उंचासकोट पृथ्वीको चीन्हा॥
क्षीर तोय जस परत मलाई। अस जलपर पृथ्वी ठहराई॥
बारह दंत राहु महिकरमूला। पवन प्रचण्ड महीस्थूला॥
अंडस्वरूप आकाशको जानों। ताके बीच पृथ्वी अनुमानों॥

कूर्म उदर सुत कूर्म उत्पानो । तापर शेष वराहको थानो ।
शेष सीस या पृथ्वी जानो । ताके हेठ कूर्म बिरयानो ॥
किरतम कूर्म अण्डके मांही । कूर्म अंश सो भिन्न रहाही ॥
आदि कूर्म रह लोक मँझारा । तिनपुनिपुरुषध्यानअनुसारा॥

कूर्मवचन सत्पुरुषप्रति

निरंकार कीन्हो बरियाया । कालकलाधरि मो पहँ आया॥
उदर विदार कीन्ह उन मोरा । आज्ञा जानि कीन्ह नहिं थोरा॥

पुरुष वचनकूर्मप्रति

पुरुष अवाज कीन्ह तेहिबारा । छोटे बंधु वह आहि तुम्हारा॥
आही यही बडनकी रीती । औगुन ठावँ करहिं वह प्रीती॥

कबीरवचन धर्मप्रति

पुरुषवचन सुनि कूर्म आनंदा । अमीसरूप सो आनंदकंदा ॥
पुरुष ध्यानपुनि कीन्हनिरंजन । जुग अनेक किय सेवा संजन ॥
स्वार्थ जानि सेवा तिन लाई । करि रचना बैठे पछताई ॥
धर्मराय तब कीन्ह विचारा । कहवालो त्रयपुर विस्तारा ॥
स्वर्ग मृत्यु कीन्हो पाताला । विनाबीजकिमिकीजै ख्याला॥
कौन भांति कस करव उपाई । किहि विधि रचों शरीर बनाई॥
कर सेवा मांगों पुनि सोई । तिहुँ पुर जीवित मेरो होई ॥
करि विचार अस हठ तिनधारा । लाग्यो करने पुरुष विचारा॥
एक पांव तब सेवा कियेऊ । चौंसठ युगलों ठाढे रहेऊ ॥

बहुरि पुरुषका सहजको निरंजनके निकट भेजना । छन्द

दयानिधि सतपुरुष साहिब, बस सुसेवाके भये ॥
बहुरि भाष्यो सहज सेती, कहा अब याचत नये॥
जाहु सहज निरंजनापहँ, देउ जो कुछ मांगई ॥
करहि रचना पुरुष वचना, छल मता सब त्यागई ॥

सहजका निरंजनके निकट पहुँचना

सो०-सहज चले सिरनाय, जबहिं पुरुष आज्ञा कियो॥
तहँवा पहुचे जाय, जहां निरंजन ठाढरह ॥१४॥
देखत सहज धर्म हरषाना। सेवा वस पुरुष तब जाना॥

सहजवचन

कहै सहज सुनु धर्मराया। केहि कारण अब सेवा लाया॥

निरंजनवचन

धर्म कहै तब सीस नवायी। देहु ठौर जहँ बैठौं जायी॥

सहजवचन

तब सहज अब भाषै लीन्हा। सुनहु धर्म तेही पुरुष सब दीन्हा॥
कूर्म उदर सो जो कछु आवा। सो तोहि देन पुरुष फरमावा॥
तीनों लोक राजा तोहि दीन्हा। रचना रचहु होहु जनि भीना॥

निरंजनवचन

तबैं निरंजन विनती लायी। कैसे रचना रचूं बनायी॥
पुरुषहिं कहौं जोर युग पानी। मैं सेवक दुतिया नहिं जानी॥
पुरुष सो विनती करो हमारा। दीजै खेत बीज निज सारा॥
मैं सेवक दुतिया नहीं जानूं। ध्यानपुरुषको निशिदिन आनूं॥
पुरुषहिं कहो जाय यह बानी। देहु बीज अम्मर सहिदानी॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

सहज कह्यो पुनि पुरुषहि जाई। जस कछु कह्यो निरंजनराई॥
गयो सहज निजदीपसुखासन। जबहि पुरुष दीन्हे अनुशासन॥
सेवा वश सत्पुरुष दयाला। गुण औगुण नहिं चित किरपाला॥

अष्टाकी उत्पति

इच्छा कीन पुरुष तेहि बारा। अष्टंगी कन्या उपचारा॥
अष्ट बाहु कन्या होय आई। बायें अंग सो ठाढ़ रहाई॥

अष्टाकी उत्पति

माथ नाय पुरुष सो कहई। अहो पुरुष आज्ञा कस अहई॥

सत्य पुरुषका आद्याको मूलबीज देना

पुरुष वचन अद्याप्रति

तबहीं पुरुष वचन परगासा। पुत्री जाहु धरमके पासा ॥
देहुँ वस्तु सो लेहु सम्हारी। रचहु धर्म मिलि उतपतिवारी॥

कवीरवचन धर्मदासप्रति

दीन्हो बीज जीव पुनि सोई। नाम सुहंग जीव कर होई ॥
जीव सोहंगम दूसर नाहीं। जीवसों अंश पुरुष को आहीं॥
शक्ति पुनि तीन पुरुष उत्पाना। चेतनि उलंघनि अभया जाना॥

छन्द

पुरुष सेवावश भये तब, अष्ट अंगहि दीन्ह हो ॥
मानसरोवर जाहु कहिया, देहु धर्महि चीन्ह हो ॥
अष्टङ्गी कन्या हती जेहि, रूप शोभा अति बनी॥
जाहुकन्या मानसरवर, करहु रचना अति घनी ॥
सोरठा—चौरासी लखजीव, मूलबीज तेहिसंग दे ॥
रचना रचहु सजीव, कन्या चलि सिरनायके॥

यह सब दीन्हो आदि कुमारी। मानसरोवर चलिभई नारी ॥
ततछिन पुरुष सहज टेरावा। धावत सहज पुरुष यहिं आवा॥

पुरुषवचन सहजप्रति

जाही सहज धरम यह कहेहू। दीन्ह वस्तु जस तुम चहेहू॥
मूल बीज तुमपहँ पठवावा। करहु सृष्टिजसतुवमनभावा॥
मानसरोवर जाहि रहाहू। ताते होइ है सृष्टि उराहू ॥

पुनि सहजका निरंजनके ढिग जाना

चले सहज तहवाँ तब आये। धर्म धीर जहँ ठाढ़ रहाये ॥
कहेउ सुवचन पुरुषको जबहीं। धर्मराय सिर नायो तबहीं ॥

निरंजनका मानसरोवरमें अष्टाको पाकर मोहवश हो उसे निगल जाना और सत्यपुरुषका शाप पाना

पुरुष वचन सुन तबही गाजा । मानसरोवर आन विराजा ॥
आवत कामिनी देख्यो जबही । धर्मराय मन हरष्यो तबही ॥
कहा देखि अष्टंगी केरी । धर्मराय इतरान्यो हेरी ॥
कहा अनन्त अंत कछु नाहीं । काल मगन है निरखत ताहीं ॥
निरखत धर्मसु भयो अधीरा । अंग अंग सब निरख शरीरा ॥
धर्मराय कन्या कहै ग्रासा । कालस्वभाव सुनो धर्मदासा ॥
कीन्हीं ग्रास काल अन्याई । तब कन्या चित विस्मय लाई ॥
तत छण कन्या कीन्ह पुकारा । काल निरंजन कीन्ह अहारा ॥
तबही धर्म सहज लग आई । सहज शून्य तब लीन्ह छुड़ाई ॥
पुरुष ध्यान कूर्म अनुसारा । मोसनकाल कीन्ह अधिकारा ॥
तान शीश मम भच्छण कीन्ह्यो । हो सत पुरुष दया भल चीन्ह्यो ॥
यही चरित्र पुरुष भल जानी । दीन्ह शापसो कहों बखानी ॥

पुरुषका शाप निरंजनप्रति

लच्छ जीव नि ग्रासन करहू । सवालच्छ नितप्रति बिस्तरहू ॥

छन्द

पुनिकीन्हपुरुषतियानतिही, किमिमेटिडारोकालहो
कठिन काल कराल जीवन, बहुत करइ बिहाल हो ॥
यहि मेटत अबना बनै मुहिं, नालाइक सुत षोडसा ॥
एक मेटत सबै मिटिहै, वचन डोल अडोलसा ॥ १६ ॥
सोरठा–डोल वचन हमार, जो अब मेटा धरमका ॥
वचन करो प्रतिपाल, देश मोर अब ना लहैं ॥ १६ ॥

सत्पुरुषका जोगजीतका निरंजनके पास उसे मानसरोवरसे
निकाल देनेकी आज्ञा देकर भेजना

जोगजीत कह पुरुष बुलावा। धर्मचरित सब कहि समुझावा॥

सत्पुरुष वचन जोगजीत प्रति

जोगजीत तुम बेगि सिधारो। धर्मरायको मारि निकारो॥
मानसरोवर रहन न पावै। अब यहि देशकाल नहिं आवै॥
धर्मके उदर माहिं है नारी। तासो कहो निजशब्द सम्हारी॥
जाकर रहो धर्म वहि देशा। स्वर्ग मृत्यु पाताल नरेशा॥
उदर फारिकै बाहर आवै। धर्मविदार उदार फल पावै॥
धर्मरायसों कहो विलोई। वहै नारि अब तुम्हारी होई॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

जोगजीत चल भे शिर नाई। मानसरोवर पहुँचे जाई॥
जोगजीत कहँ देखा जबहीं। अति भो काल भयंकर तबहीं॥

निरंजनवचन जोगजीतप्रति

पूछा काल कौन तुम आई। कौन आज तुम यहां सिधाई॥

जोगजीतवचन निरंजन प्रति

जोगजीत अस कहै पुकारी। अहो धर्म तुम ग्रासेहु नारी॥
आज्ञा पुरुष दीन्ह यह मोही। इहिंते बेगि निकारो तोही॥

जोगजीतवचन अद्या प्रति

जोगजीत कन्या सो कहिया। नारी कहे उदरमहँ रहिया॥
उदरफारि अब आवहु बाहर। पुरुष तेज सुमिरो तेहि ठाहर॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

सुनिके धर्म क्रोध उर जरेऊ। जोगजीत सौ सन्मुखभिरेऊ॥
जोगजीत तब कीन्हे ध्याना। पुरुष प्रताप तेज उर आना॥
पुरुष आज्ञा भई तेहि काला। मारहु माझ लिलार कराला॥
जोगजीत पुनि तैसो कीन्हा। जस आज्ञा पुरुष तेहि दीन्हा॥

छन्द

गहि भुजा फटकार दीन्हों, परेउ लोकत न्यारहो॥
भयो त्रासित पुरुष डरते, बहुरि उठेउ सम्हार हो॥
निकसि कन्या उदरते पुनि, देख धर्महि अतिडरी॥
अब नाहिंदेखोदेश वह, कहो कौनविधिकहवाँपरी १७
सोरठा-कामिनिरहीसकाय, त्रासितकालकडरअधिक
रही सो सीस नवाय, आसपासचितवत खड़ी ॥१७॥

निरंजनवचन अद्याप्रति

कहै धर्म सुनि आदि कुमारी । अब जनि डरपो त्रास हमारी॥
पुरुषा रचा तोहि हमरे काजा । इकमति होय करहु उपराजा॥
हम हैं पुरुष तुमहि हो नारी ।अब जनि डरपो त्रास हमारी॥

अद्यावचन निरंजनप्रति

कहै कन्या कस बोलहु बानी । भ्राता जेठ प्रथम हम जानी॥
कन्या कहै सुनो हो ताता ।ऐसी विधि जनि बोलहु बाता॥
अब में पुत्री भई तुम्हारी । ताते उदर मांझ लियो डारी॥
जेष्ठ बन्धु प्रथमहिके नाता । अब तो अहो हमारे ताता॥
निरमलदृष्टिजब चितवहु मोहीं ।नहिं तो पाप होय अब तोहीं॥
मन्द दृष्टि जनि चितवहु मोही। ना तो पाप होय अब तोही॥

निरंजनवचन अद्याप्रति

कहै निरंजन सुनो भवानी । यह मैं तोहि कहों सहिदानी॥
पाप पुण्य डर हम नहिं डरता। पाप पुण्यके हमहीं करता॥
पाप पुन्य हमहींसे होई । लेखा मोर न लेहै कोई॥
पाप पुन्य हम करब पसारा । जो बाझे सो होय हमारा॥
ताते तोहिं कहौ समुझाई । सिख हमार लो सीस चढ़ाई॥
पुरुष दीन तोहिं हमकहँ जानी । मानहु कहा हमार भवानी॥

कबीरवचन धर्मदास प्रति

बिहँसी कन्या सुन अस वाता। इक मति होय दोई रंगराता॥
रहस वचन बोली मृदु बानी।नारिनीचबुधिरतिविधिठानी॥
रहसवचन सुनि धरम हरषाना। भोग करनको मनमें आना॥

छन्द

मन नहिं कन्या कहती असचरितकीन्ह निरंजना॥
नख घात कियेभगद्वारततछिण, घाटउत्पतिगंजना॥
नखं रेषशोनितचल्या, तिहुँको खब खासआरंभनी॥
आदिउत्पत्तिसुनहु धर्मनि, कोउ नहिं जानत जम मनी॥
त्रियावार कीन्ही रति तबै,भये ब्रह्मा विष्णु महेशहो॥
जेठे विधि विष्णु लघु तिहि,तीज शंभु शेष हो॥१८॥
सोरठा-उत्पति आदिप्रकाश,यहिविधितेहिप्रसंगभो॥
कीन्हो भोगविलास,इकमनि कन्या काल है॥१८॥

भवसागरकी रचना

तेहि पीछे ऐसा भो लेखा। धर्मदास तुम करौ विवेका॥

निरंजनवचन अथाप्रति

अग्निपवनजलमहि आकाशा। कूर्म उदरतें भयो प्रकाशा॥
पांचौ अंस ताहि सन लीन्हा। गुण तीनों सीसनसों कीन्हा॥
यहि विधि भयेतत्त्वगुण तीनों। धर्मराज तब रचना कीनों॥

कबीर वचन धर्मदास प्रति

गुणतसम कर देविहि दीन्हा। आपन अंश उत्पने कीन्हा॥
बुन्द तीन कन्या भग डारा। तासँग तीनों अंग सुधारा॥

---

१ यह तो पुरानी प्रतियोंमें ऐसाही है किन्तु नवीन प्रतियोंमें उपर्युक्त दोनों पंक्ति नहीं हैं जो विचारपूर्वक प्रसंगोंके पढनेसे ठीक नहीं जान पड़ता।

पांच तत्त्व गुण तीनों दीन्हा। यहिबिधिजनकीरचना कीना॥
प्रथम बुन्दते ब्रह्म जो भयऊ। रजगुणपंचतत्त्व तेहि दयऊ॥
दूजो बुन्द विष्णु जो भयऊ। सतगुण पंच तत्त्वतिन पयऊ॥
तीजे बुन्द रुद्र उत्पाने। तमगुण पंच तत्त्व तेहि साने॥
पंच तत्त्व गुण तीन खमीरा। तीनों जनको रच्यो शरीरा॥
ताते फिरि फिरि परलय होई। आदि भेद जाने नहिं कोई॥
कहै धर्म कामिनि सुनबानी। जो मैं कहूँ लेहु सोमानी॥
जीव बीज आहै तुव पासा। सो ले रचना करहु प्रकाशा॥
कर्ण निरञ्जन पुनि सुनु रानी। अब अस करहु आदि भवानी॥
त्रय सुत सौंप तोहि कहँ दीन्हा। अबहमपुरुषसेवचित्त लीन्हा॥
राज करहु तुम लै तिहुँ बारा। भेद न कहियो काहु हमारा॥
मोर दरस त्रय सुत नहिं पैहैं। जो मुहि खोजत जन्म सिरैहैं॥
ऐसो मता दिढैहो जानी। पुरुष भेद नहिं पावै प्रानी॥
त्रयसुत जबहिं होहिं बुधिवाना। सिंधुमथन दे पठहु निदाना॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

कहेउ बहुत बुझाय देविहि, गुप्त भये तब आहि हो॥
शून्य गुफहिं निवास कीन्हों, भेद लहको ताहि हो॥
वह गुप्त भा पुनि सङ्ग सबके, मन निरंजन जानिये॥
मन पुरुष भेद उच्छेद देवे, आप परगट आनिये॥
सो०–जीवभयेमतिहीन, परिसि अगमसो कालको॥
जनम जनम भये खीन, मुरुचा कर्म अकर्मको १८
जीव सतावै काल, नाना कर्म लगायके॥
आप चलावै चाल, कष्ट देय पुनि जीवको॥२०॥

सिन्धुमथन और चौदह रत्न उत्पत्तिकी कथा

त्रय बालक जब भये सयाने । पठये जननी सिंधु मथाने ॥
बालक माते खेल खिलारी । सिंधुमथनहिं गयउ खरारी ॥
तेहि अंतर इक भयौ तमासा । सो चरित्र बूझो धर्मदासा ॥
धार्‍यो योग निरंजन राई । पवन आरंभ कीन्ह बहुताई ॥
त्यागो पवन रहित पुनि जबही । निकसेउ वेदस्वास सँग तबही ॥
स्वास सँग आयउ सो वेदा । बिरला जन कोई जानेभेदा ॥
अस्तुति कीन्हवेद पुनि ताहां । आज्ञाका मोहि निर्गुनाहां ॥
कह्यौ जाव करू सिंधुनिवासा । जेहि भेटे जैहौ तिहिपासा ॥
उठी आवाज रूप नहिं देखा । जोतिअगम दिखलावतभेखा ॥
जलेउ वेद पुनि तेज अपाने । तेज अन्न पुनि विष संधाने ॥
चले वेद तहँवा कहँ जाई । जहँवा सिंधु रचा धर्मराई ॥
पहुँचे वेद तब सिंधु मँझारा । धर्मराय तब युक्ति विचारा ॥
गुप्त ध्यान देविहि समुझावा । सिंधुमथनकहँकसबिलमावा ॥
पठवहु बेगि सिंधुत्रय बारा । दृढ़कै शोचहु वचन हमारा ॥
बहुरिआपपुनि सिंधु समाना । देवी कीन्ह मथन अनुमाना ॥
तिहुँबालक कहँ कह समुझायी । आशिष दे पुनि तहां पठायी ॥
पैहो वस्तु सिन्धुके पाहीं । जाहु वेगि तीनों सुत ताहीं ॥
चलिभौ ब्रह्मा मान सिखाई । दोउ लहुरा पुनि पाछे जाई ॥

छन्द

त्रय सुत बाल खेलत चले, ज्योंसुभगबालमरालहो ॥
एकगहिछोड़तमहीपुनि, एककरगहिचलतलटपटचालहो ॥
क्षणहिधावतक्षणस्थिर खड़े, क्षणभुजहिगरलावहीं ॥
तेहि समयकी शोभा भली, नहिं वेद ताकहँ गावहीं ॥

सोरठा–गये सिंधुके पास, भये ठाढ़ तीनों जने ॥
युक्तिमथनपरकास,एक एकको निरखही ॥२१॥

प्रथमवार सिन्धु मथन

तीनों कीन्ह मथन तब जाई । तीन वस्तु तीनों जन पाई ॥
ब्रह्मा वेद तेज तेहि छोटा । लहुरा तासुमिलेविष खोटा ॥
भेटि वस्तु त्रय तीनों भाई । चलिभये हर्षकहत जहँमाई ॥
मातापहँ आये त्रय वारा । निजनिजवस्तुप्रगट अनुसारा॥
माता आज्ञा कीन्ह प्रकाशा । राखुवस्तुतुमनिजनिज पासा॥

द्वितीय वार सिन्धुमथन

पुनि तुम मथहु सिन्धु कहे जाई। जो जेहि मिले लेउ सो भाई॥
कीन्हचरितअस आदिभवानी। कन्या तीन कीन्ह उत्पानी ॥
कन्या तीन उत्पान्यो जबहीं । अंसवारिमहँ नायो सबहीं ॥
सब माताको आगे कीन्हा । माताबांटितिन्हनकहँ दीन्हा ॥
पठयो सिंधु महि पुनि ताही । त्रय सुत मर्मसो जानत नाहीं॥
पुनि तिन मथनसिंधुको कीन्हा। भेटचो कन्याहर्षितह्वै लीन्हा ॥
कन्या तीनहु लीन्हे साथा । औ जननी कहँ नायहु माथा॥
माता कहे सुनहु सुत मोरा । यह तो काज भये सब तोरा॥
एकएकबांटि तीनहुको दीन्हा । काहु भोग कस आज्ञा कीन्हा॥
सावित्री ब्रह्मा तुम लेऊ । है लक्ष्मी विष्णु कहँ देऊ ॥
पारवती शंकर कहँ दीन्ही । ऐसी माता आज्ञा कीन्हीं ॥
तीनउ जन लीन्हीं सिरनाई । दीन्ह अद्याजस भाग लगाई॥
पाई कामिनि भये अनन्दा । जस चकोर पाये निशिचंदा ॥
काम बसी भए तीनों भाई । देव दैत दोनों उपजाई ॥
धर्मदास परखो यह बाता । नारी भयी हती सो माता ॥
माता बहुरि कहें समझाई । अब फिर सिंधु मथो तुम भाई॥
जो जेहि मिलै लेहुसो जाई । अबजनिकरोविलंब तुम भाई॥

तृतीयवार सिंधुमथन

त्रयसुत चले तब माथ निवायो । जो कछु कहेउ करब हम जायो ॥
मध्योसिंधु कछु विलंबन कीन्हा। मिला वेदसो ब्रह्मै लीन्हा ॥
चौदह रतनकी निकसी खानी । ले माता पहँ पहुँचे आनी ॥
तीनहु बन्धु हरषि है लीन्हा । विष्णु सुधा पायउ हर विष दीन्हा ॥

अद्याका तीनों पुत्रोंको सृष्टिरचनेकी आज्ञा देना और सब मिलकर पांच खानकी उत्पत्ति करना

पुनि माता अस वचन उचारा। रचहु सृष्टि तुम तीनों बारा ॥
अण्डज उत्पत्ति कीन्हा माता। पिंडज ब्रह्मा कर उत्पाता ॥
ऊष्मज खानि विष्णु व्यवहारा। शिव अस्थावर कीन्ह पसारा ॥
चौरासी लख योनिन कीन्हा । आधा जल आधा थल कीन्हा ॥
एक तत्त्व अस्थावर जाना । दोय तत्त्व ऊष्मज परवाना ॥
तीन तत्त्व अण्डज-निरमाई । चार तत्त्व पिंडज उपजायी ॥
पांच तत्त्व मानुष विस्तारा । तीनों गुण तेहि माहिं सँवारा ॥

ब्रह्माका वेद पढकर निराकारका पता पाना

ब्रह्मा वेद पढ़न तब लागा । पढ़त वेद तब भा अनुरागा ॥
कहे वेद पुरुष इक आही । हैं निरंकार रूप नहिं ताही ॥
शून्य माहिं वहि जोत दिखावे । चितवन देह दृष्टि नहिं आवे ॥
स्वर्ग सीस पग आहि पताला। तेहि मत ब्रह्मा भो मतवाला ॥
चतुरानन कहें विष्णु बुझावा । आदिपुरुष मोहिं वेद लखावा ॥
पुनि ब्रह्मा शिवसों अस कहई। वेद मथन पुरुष एक अहई ॥

ब्रह्मावचन विष्णुप्रति

अहै पुरुष इक वेद बतावा । वेद कहे हम भेद न पावा ॥

कबीरवचन अद्याप्रति

तब ब्रह्मा माता पहँ आवा । करि प्रणाम तब टेके पावा ॥

ब्रह्मावचन अद्याप्रति

हे माता मोहि वेद लखावा । सिरजनहार और बतलावा ॥

छन्द

ब्रह्मा कहे जननी सुनौ, कहहु कन्त तुम्हार है ॥
कीजै कृपा जनि मोहि दुरावो,कहाँ पिता हमार है॥

अद्यावचन ब्रह्माप्रति

कहे जननीसुनहुब्रह्मा,कोउ नहिं जनक तुम्हारहो॥
हमहितेभई सब उत्पति,हमहिसबकीनसम्हारहो२१॥

ब्रह्मावचन अद्याप्रति

सोरठा-ब्रह्मा कहे पुकार, सुनु जननी तैं चित्त दे॥
कहत वेद निरुवार, पुरुष एक सोगुप्त है ॥२२॥

अद्यावचन ब्रह्माप्रति

कहे अद्या सुनु ब्रह्मकुमारा । मोसे नहिं कोउ स्रष्टा न्यारा॥
स्वर्ग मृत्यु पाताल बनाई । सात समुन्दर हम निरमाई॥

ब्रह्मावचन अद्याप्रति

मानो वचन तुमहि सब कीन्हा । प्रथमगुप्त तुम कसरखलीन्हा॥
जबै वेद मोहि कहै बुझाई । अलखनिरंजन पुरुष बताई ॥
अब तुम आप बनो करतारा । प्रथम कहे न किया विचारा॥
जोतुम वेद आप कथि राखा ।तोकसतुमअलखनिरंजनभाखा
आपे आप आप निरमाई । काहे न कथन कीन तुम माई॥
अब मोसनतुमछलजनिकरहू ।सांचे सांच सब कहि उच्चरहू॥
जब ब्रह्मा यहिविधि हठठाना । तब अद्यामन कीन्हतिवाना॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

केहि विधि याहि कहूँ समझाई । विधि नहिं मानत मोर बड़ाई॥
जो यदि कहौं निरंजन वाता ।केहिविधिसमझे यह विख्याता॥
प्रथम कह्यो निरंजन राई । मोर दरश काहू नहि पाई ॥
जबै जो यहीं अलख लखावों।केहिविधिकहिताकोदिखलावों॥

अष्टावचन ब्रह्माप्रति

असविचार पुत्रब्रह्मै समझावा। अलखनिरञ्जनहिंदरसदिखावा॥

ब्रह्मावचन अष्टाप्रति

ब्रह्मा कहै मोहि ठौर बतावो। आगा पीछा जनि तुम लावो॥
मैं नहिं मानौं तुम्हारी बाता। ऐसी बात न मोहि सुहाता॥
प्रथम तुम मुहि दीनभुलावा। अब तुम कहो न दरसदिखावा॥
तासु दरश न पैहो पूता। ऐसी बात कहो अजगूता॥

छन्द

दरशदिखायतत्कालदीजै, मोहिनभरोसतुम्हारहो॥
संशयनिवारयहिकालदीजै, कीजेनविलंबलगारहो॥

अष्टावचन ब्रह्माप्रति

कह जननी सुनो ब्रह्मा, कहौं तोसों सत्तही॥
सातस्वर्ग है माथ ताको, चरण पतालसप्तही॥२२॥
सोरठा–लेहु पुष्प तुम हाथ, जो इच्छा तेहि दरशकी
जाय नवाओ माथ, ब्रह्मा चले शिरनाइके॥२३॥
जननी गुन्यो वचन चितमाहीं। मोरि कहो यह मानति नाहीं॥
यह कहँ वेद दीन्ह उपदेशा। पै दरश ते नहिं पावै भेशा॥
कह अष्टंगि सुनो रे बारा। अलखनिरञ्जन पिता तुम्हारा॥
तासु दरश नहिं पैहै पूता। यह मैं वचन कहौं निजगूता॥
ब्रह्मा सुनि व्याकुल ह्वै धावा। परसन सीस ध्यानहियलावा॥
ब्रह्मा चले जननि सिर नाई। सीस परसि आवै तेही ठाई॥
तुरतहि ब्रह्मा दीन्ह रिंगायी। उत्तर दिशा बेगि चलि जाई॥
आज्ञा मांगि विष्णु चलेबाला। पिता दरशको चले पताला॥
इत उत चितयमहेश न डोला। सेवा करत कछू नहीं बोला॥

तेहिशिवमनअसचिंतअभावा । सेवा करनजननि चितलावा ॥
यहिविधिबहुतदिवसचलिगयऊ। माता सोचपुत्र कह कियऊ॥

विष्णुका पिताके खोजसे लौटकर पिताके चरणतक
न पहुँचनेका वृत्तान्त कहना

प्रथम विष्णुजननी ढिग आये । अपनी कथा कहि समुझाये॥
भेंट्यो नहिं मोहि पगु ताता । विषज्वालास्यामल भौगाता॥
व्याकुल भयउ तबै फिर आवा । पिता पगुदरश मैं नहिं पावा॥
सुनि हरषित भइ आदिकुमारी । लीन्हविष्णुकहँनिकटदुलारी॥
चूमेउ बदन सीस दिये हाथा ।सत्य सत्य बोलउ सुतबाता॥

धर्मदासवचन कबीरप्रति

कहे धरमनि यह संशय बीती । साहब कहहु ब्रह्मकी रीती ॥
पितासीस तना परसन कीन्हा। किहोयनिरासपीछेपग पीन्हा॥

छन्द

गयउ ब्रह्मा सीस परसन, कथा ता दिनकी कही॥
भयो दिष्ट मेराव कि,नहि तासु दरशन तिनलही॥
यह बरनि सब कहो सतगुरु, एकएक विलीयके ॥
निजहास जानि परगासकीजे, धरहुनिजजनिगायके२३॥
सो०-प्रभु हम हैं तुव दास, जन्मकृतारथमोरिकरि॥
करहु वचन परगास,तेहि पीछे जो चरित भा ॥२४॥

पिताके खोजमें गये हुए ब्रह्माकी कथा । कबीरवचन धर्मदासप्रति

धरमदास मुहिं अतिप्रिय अहहू। कहो संदेश परखि दृढगहहू ॥
चलत ब्रह्म तब वार न लावा । पिता दरश कहँअतिमनभावा॥
तेहि स्थान पहुँचि गे जाई । नहिं तहँरविशशि शून्यरहाई॥
बहुविधि अस्तुति करे बनायी । ज्योति प्रभावध्यानतहँलाई॥

ऐसे बहु दिन गये बितायी । नहि पायो ब्रह्मा दरशपितायी ॥
शून्य ध्यानयुग चार गमावा । पिता दरश अजहुँ नहिं पावा ॥

ब्रह्मा के लिये अद्याकी चिन्ता

ब्रह्मा तात दरश नहिं पाई । शून्य ध्यान महँ जुग बहु जाई ॥
माता चिंता करत मनमाहाँ । जेठ पुत्र ब्रह्मा रह काहाँ ॥
किहि विधि रचना रचहुँ बनाई । ब्रह्मा आवै कौन उपाई ॥

गायत्री उत्पत्ति

उबटि शरीर मैल (न) गहिकाढी । पुत्री रूप कीन्ह रचिठाढी ॥
शक्ति अंशनिज ताहि मिलावा । नाम गायत्री ताहि धरावा ॥
गायत्री मातहि सिर नावा । चरणचूमि निज सीस चढ़ावा ॥

गायत्रीवचन अद्याप्रति

गायत्री विनवै कर जोरी । सुनु जननी यक विनती मोरी ॥
कौन काज मोहँ निरमाई । कहो वचन लेउँ सीस चढ़ाई ॥

अद्यावचन गायत्रीप्रति

कहे अद्या पुत्री सुनु वाता । ब्रह्मा आहि जेठहि तुव भ्राता ॥
पिता दरश कहँ गयो अकाशा । आनौ ताहि वचन प्रकाशा ॥
दरश तातकर वह नहिं पावे । खोजत खोजत जन्म गमावे ॥
जौने विधिते इहँवा आई । करो जाय तुम तीन उपाई ॥

गायत्रीका ब्रह्माके खोजमें जाना । कबीर वचन धर्मदासप्रति

चलि गायत्री मारग आई । जननी वचन प्रीति चितलाई ॥
चलत भई मारग सुकुमारी । जननी वचन ध्यान उर धारी ॥

छन्द

जाय देखो चतुरमुख कहँ, नाहिं पलक उघारई ॥
कछुक दिन सो रही तहवाँ, बहुरि युक्ति विचारई ॥
कौन विधि यह जागि है, अबकरौं कौन उपायहो ॥
मनगुनितसोचबहुतविधि, ध्यानजननीलायहो २४ ॥

ब्रह्माको जगानेके लिये अष्टाका गायत्रीको युक्ति बताना

सो०-अद्या आयसु पाइ, गायत्री तब ध्यान महँ ॥
निज कर परसेउ जाय,ब्रह्मा तबहीं जागि है ॥२४॥

गायत्री पुनि कीन्ह तैसी । माता युक्ति बताई जैसी ॥
गायत्री तब चित्त लगाई । चरणकमल कहँ परसेउ जाई॥

ब्रह्माका जागकर गायत्रीपर क्रोध करना

ब्रह्मा जाग ध्यान मन डोला । व्याकुल भयो वचन तब बोला॥
कवन अहै पापिन अपराधी । कहा छुड़ायहु मोरि समाधी॥
शाप देहुँ तोकहँ मैं जानी । पिताध्यानमोहिखण्डचोआनी

गायत्री वचन ब्रह्माप्रति

कहि गायत्री मोहिन पापा । बूझि लेहु तब देहहु शापा ॥
कहों तोहिसो सांची बाता । तोहि लेन पठयी तुव माता॥
चलहु वेगि जननिलावहुबारे । तुम विन रचना को विस्तारे॥

ब्रह्मावचन गायत्रीप्रति

ब्रह्मा कहे कौन विधि जाऊँ । पितादरश अजहुँ नहिं पाऊँ॥

गायत्रीवचन ब्रह्माप्रति

गायत्री कह दरशन पैहो । बेगि चलहु नहिं तो पछतै हो॥

ब्रह्माका गायत्रीको साक्षी देनेको कहना और गायत्रीका
ब्रह्मासे रति करनेकी बात कहना

ब्रह्मा कहे देहु तुम साखी । परस्यो सीस देख मैं आंखी॥
ऐसे कहो मातु समुझायी । तो तुम्हरे सङ्ग हम चलिजायी॥

गायत्रीवचन ब्रह्माप्रति

कह गायत्री सुन श्रुति धारी । हम नहीं मिथ्या बचन उचारी॥
जो मम स्वारथ पुरवहु भाई । तो हम मिथ्या कहब बनाई॥

ब्रह्मावचन गायत्रीप्रति

कह ब्रह्मा नहिं लखी कहानी । कहौं बुझाय प्रगटकी बानी ॥

गायत्री वचन

कह गायत्री देहु रति मोही। तो कह झूठ जिताऊं तोही॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

गायत्री कहै है यह स्वारथ। जानि कहौं मैं पुन परमारथ॥
सुनि ब्रह्मा चित करे विचारा। अबका यत्न करहुँ इहिबारा॥

छन्द

जो विमुख या कह करौं अब तो नहीं बन आवई॥
साखि तो यह देय नहीं जननि मोहि लजावई॥
यहाँ नाहिं पिता पायो भयो न एको काज हो॥
पाप सोचत नहिं बने अब करौं रति विधि साजहो२५
सो०–कियो भोगरतिरंग, विसऱ्यो सो मनदरशका
दोउ कहँ बढ्यो उमंग, छलमति बुद्धिप्रकाशकिले २६॥

सावित्री उत्पत्तिकी कथा

कह ब्रह्मा चल जननी पासा। तब गायत्री वचन प्रकाशा॥
औरो करौ युक्ति इक ठानी। दूसरी साखि लेहु उत्पानी॥
ब्रह्मा कहे भली है बाता। करहु सोई जेहि मानै माता॥
तब गायत्री यतन विचारा। देहि मैल गहि कीन्ह नियारा॥
कन्यारचि निज अंशमिलावा। नाम सावित्री तासु धरावा॥
गायत्री तिहि कह समुझावा। कहियो दरशब्रह्म पितु पावा॥
कह सावित्रीहम नहिं जानी। झूठ साखि दे आपनि हानी॥
यहसुनिदोउकहँचिन्ता व्यापा। यह तौ भयो कठिन संतापा॥
गायत्री बहु विधि समुझाई। सावित्री के मन नहिं आयी॥
पुनि गायत्री कहा बुझाई। तब सावित्री वचन सुनाई॥
ब्रह्मा कर मोसों रति साजा। तो मैं झूठ कहौं यहि काजा॥
गायत्री ब्रह्महि समुझावा। दै रति या कहँ काज बनावा॥
ब्रह्मा रति सावित्रिहि दीन्हा। पापमोट आपन शिर लीन्हा॥

सावित्री कस दूसर नाऊं। कहि पुहुपावति वचन सुनाऊं॥
तीनों मिलिके चलि भे तहवां। कन्या आदिकुमारी जहवां॥

ब्रह्माका गायत्री और सावित्री के साथ माताके पास पहुँचना
और सबका शाप पाना

करि प्रणाम सन्मुख रहे जाई। माता सब पूछी कुशलाई॥

अद्यावचन ब्रह्माप्रति

कह ब्रह्मा पितु दरशन पाये। दूसरि नारि कहांसे लाये॥

ब्रह्मावचन

कह ब्रह्मा दोऊ हैं साखी। परस्यो सीस देव इन आंखी॥

अद्यावचन गायत्रीप्रति

तब माता बूझे अनुसारी। कहु गायत्री बचन बिचारी॥
तुम देखा इन दर्शन पावा। कहा सत्य दर्शन परभावा॥

गायत्रीवचन

तब गायत्री वचन सुनावा। ब्रह्मा दर्श सीस पितु पावा॥
मैं देखा इन परसेउ शीशा। ब्रह्महि मिले देव जगदीशा॥

छन्द

लेइ पुहुप परसेउ शीशपितु इन दृढमें देखत रही॥
जल ढार पुहुप चढ़ाय दीन्ह हे जननि यह है सही॥
पुहुपते पुहुपावती भयी प्रगट ताही ठामते॥
इनहु दर्शन लह्यो पितुको पूछहु इहि वामते॥२६॥
हे जननी यह है सही तुम पूछि लो पुहुपावती॥
सबही सांच में तोसों कहूँ नहिं झूठहै एको रती॥

अद्यावचन पुहुपावतीप्रति

माता कह पुहुपावतीसी कहो सत्य हि मो सना॥
जो चढ़े सीसहि पिताके तुम वचन बोलहु ततखना॥

१ यह छन्द पुरानी प्रतियोंमें नहीं है

सो०–कहु पुहुपावति मोहि, दरश कथा निरवारके॥
यह मैं पूछों तोहि, किम ब्रह्मादरशन किये॥२७॥

सावित्री वचन

पुहुपावंती वचन तब बोली। मातासत्य वचन नहीं डोली॥
दर्शन सीस लह्यो चतुरानन। चढ़े सीस यह धर निश्चय मन॥

कबीरवचन धर्मदास प्रति

साख सुनत अद्या अकुलानी। भा अचरज यह मर्म न जानी॥

अद्याकी चिंता

अलखनिरंजन अस प्रण भाखी। मोकहँ कोउ न देखै आंखी॥
ये तीनहुँ कस कहहिं लबारी। अलखनिरंजन कहहु सम्हारी॥
ध्यान कीन्ह अष्टंगी तिहि क्षण। ध्यानमहिं अस कह्यो निरंजन॥

निरंजन वचन

ब्रह्मा मोर दरश नहिं पाया। झूठिसाखिइन आन दिवाया॥
तीनों मिथ्या कहा बनाई। जनि मानहु यह है लबराई॥

अद्याका ब्रह्माको शाप देना

यह सुनि माता कीन्हे दापा। ब्रह्मा कहँ तब दीन्हो शापा॥
पूजा तोरि करै कोई नाहीं। जो मिथ्या बोलेउ मनमाहीं॥
इक मिथ्या अरु अकरम कीन्हा। नरक मोट अपने शिर लीन्हा॥
आगे है जो शाख तुम्हारी। मिथ्या पाप करहिं बहुभारी॥
प्रगट करहिं बहु नेम अपारा। अन्तर मैल पाप विस्तारा॥
विष्णु भक्तोंसे करहि हँकारा। तांते परिहैं नरक मँझारा॥
कथा पुराण औरहिं समुझै हैं। चाल विहून आपन दुख पैहैं॥

---

१ पुराने ग्रन्थोंमें यह चौपाई इस प्रकार है–

सावित्री अस वचन उचारी। मानो निश्चय वचन हमारी

उनसे और सुनैं जो ज्ञाना । करिसो भक्ति कहों परमाना॥
और देवको अंश लखैहैं । औरन निन्दि काल मुख जैहैं॥
देवन पूजा बहु विधि लैहैं । दछिना कारण गला कटै हैं॥
जा कहा शिष्य करैं पुनि जाई। परमारथ तिहि नहिं लखायी॥
परमारथके निकट न जैहैं । स्वारथ अर्थ सबै समुझैहैं ॥
आप स्वारथी! ज्ञान सुनैहैं । आपनि पूजा जगत दृढ़ै हैं ॥
आप ऊंच औरहि कहँ छोटा । ब्रह्मा तोर सखा होइ खोटा ॥

कबीर वचन धर्मदासप्रति

जब माता अस कीन्ह प्रहारा । ब्रह्मा मूर्छित महीकर धारा ॥

अथाकागायत्रीको शाप देना

गायत्री जान्यो तेहि वारा । हुए है तोर पंच भरतारा ॥
गायत्री तोर होई वृषभ भर्तारा । सात पांच और बहुत पसारा॥
धर औतार अखज तुम खायी । कहा जानि यह दीन्ही साखी॥
निज स्वारथ तुम मिथ्या भाखी। कहा जानि यह दीन्ही साखी॥
मानि शाप गायत्री लीन्ही । सावित्रिहि तबचितवन कीन्ही॥

अथाका सावित्री को शाप देना

पुहुपावति निजमान धरायेहु । मिथ्याकहनिजजन्मनशायेहु॥
सुनहुपुष्पावतितुम्हरोविश्वासा।नहिं पूजिहैं तुम्हसे कछु आशा॥
होय कुगंध ठौर तव बासा ।भुगतहु नरककामगहि आशा॥
जो तोहि सींच लगावे जानी । ताकर होय वंशकी हानी ॥
अब तुम जाय धरौ औतारा ।क्योडा केतकी नाम तुम्हारा॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति छन्द

भये शापवश तीनों विकलमति, हीनछीन कुकर्मते॥
यह काल कलाप्रचंडकामिनि,डस्यो सब कहँ चर्मते ॥

ब्रह्मादि शिवसनकादिनारदको उन बचि भागहो ॥
सुनुधरमनिविरलाबच शब्द सतसो लागि हो ॥२८॥
सो०-सत्य शब्द परताप, कालकला व्यापै नहीं ॥
निकट न आवै पाप,मनवच कर्म जो पदगहे॥२९॥

शाप देदेने पर अद्याका पश्चाताप और निरंजनके डरसे डरना । छन्द

शाप तीनोंको दैलियो मन माहीं तब पछतावई ॥
कस करहि मोहि निरंजनापल छमा मोहि नआवई॥

निरंजनका अद्याको शाप देना

आकाशबानी तबै भयी यह्न काह कीन भवानिया॥
उत्पत्तिकारणतोहिपठाई कहा चरित यह ठानिया॥
सो०-नीचहि ऊच सिताय, बदल मोहि सोपावई॥
द्वापर युग जब आय तुमहिं पञ्च भर्तार हो ॥३०॥

अद्याका निडर होना । कबीर वचन धर्मदासप्रति

शाप ओयल जब सुनेउ भवानी। मनसन गुने कहा नहिं बानी॥
ओयलप्रभाव शाप हम पाया। अब कहा करब निरंजनराया॥
तोरे वस परी हम आई। जस चाहौ तस करौ मिताई॥

विष्णुका गौरसे श्याम होने का कारण अद्यावचन विष्णुप्रति

पुनि कहि माता विष्णु दुलारा। सुनहु पुत्र इक वचन हमारा ॥
सत्य सत्य तुम कहो बुझाई। पितुपद परसन जब गे भाई॥
प्रथमहु तो तुम गौर शरीरा।कारण कौन श्याम भये धीरा॥

विष्णुवचन अद्या प्रति

आज्ञा पाय हम तत्काला।पितुपद परसन चले पताला॥
अक्षत पुहुप लीन्ह करमाहां। चले पताल पंथ मग जाहां॥
पहुँचि शेष नाग पहँ गयऊ। विषके तेज हम अलसयऊ॥

भयो श्याम विषतेज समावा । भइ अवाज अस वचन सुनावा॥
अहो विष्णु माता पहँ जाई । वचन सत्य कहियो समुझाई॥
सतयुग त्रेता जैसे जबही । द्वापर ह्वै चौथा पद तबही ॥
तब तुम होहु कृष्ण अवतारा । लैहौ ओयलसो कही विचारा॥
नाथ हु नाग कलिन्दी जाई । अब तुम जाहु विलंब न लाई॥
ऊंच होइके नीच सतावे । ताकर ओयल मोहिसो पावे॥
जो जिव देई पीर पुनि काहू । हम पुनि ओयल दिखावे ताहू ॥
पहुँचे हम तब ही तुव पासा । कीन्हेउ सत्य बचन परकाशा॥
भेटउ नाहिं मोहिं पद ताता । विषज्वाला साँवल भो गाता॥
व्याकुल भयो तबे फिर आयो । पितु पद दर्शन मैं नहिं पायो॥

अद्याका विष्णुको ज्योतिका दर्शन कराना

इतना सुनि हर्षित भइ माई । लीन्ह विष्णु कहँ गोद उठाई॥
पुनि अस कहेउ आदि भवानी । अब सुनहु पुत्रप्रियममबानी ॥
देख पुत्र तोहि पिता भिटावों । तोरे मन कर धोख मिटावों॥
प्रथमहि ज्ञान दृष्टिसों देखो । मोर वचन निज हृदय परेखो॥
मनस्वरूप करता कहँ जानो । मनते दूजा और न मानो ॥
स्वर्ग पताल दौर मन केरा । मन अस्थिर मन अहै अनेरा॥
क्षणमहँ कला अनन्त दिखावे । मनकहँ देख कोइ नहि पावे ॥
निराकार मनहीको कहिये । मनकीआशादिवसनिशिरहिये
देखहु पलटि शून्यमह जोती । जहवां झिलमिलझालर होती॥
फेरहु श्वास गगन कह धायो । मार्ग अकाशहि ध्यान लगायो॥
जैसे माता कहि समुझावा । तैसे विष्णु ध्यान मन लावा॥

छन्द

पैठि गुफा ध्यान कीन्हो श्वास संयम लायके ॥
पवन धूँका दियो जबते गगन गरज्यो आयके ॥

बाजासुनततबमगनभापुनिकीन्हमनकसख्यालहो ॥
शून्यस्वेतपीतसब्जलालदियायरंगजगालहो ॥३०॥
सो०-ताहपीछे धर्मदास, मनपनि आपदिखायऊ ॥
कीन्ह ज्योति परकास, देखि विष्णु हर्षित भये३०॥
मातहि नायो शीश, बहु अधीन पुनि विष्णुभा ॥
मैं देखा जगदीश, हे जननी परसाद तुव ॥ ३१ ॥

धर्मदास वचन

धर्मदास गहि टेके पाया । हे साहिबइकसंशय आया ॥
कन्या मनको ध्यान बतावा । सो यह सकल जीव भरमावा॥

सद्गुरु वचन

धर्मदास यह काल स्वभाऊ । पुरुष भेद विष्णू नहिं पाऊ॥
कामिनिकी यह देखहु बाजी । अमृतगोय दियो विष साजी॥
जात काल दूजा जनिजानहु ।निरखि धर्म सत्यहिं पुरआनहु॥
प्रगट सु तोहिं कहो समुझाई । धर्मदास परखहु चितलाई ॥
जब परगट तस गुप्त सुभाऊ। जोरह हृदय सो बाहर आऊ॥
जब दीपक बारे नर लोई । देखहु ज्योति सुभाव विलोई॥
देखत ज्योति पतंग हुलासा । प्रीति जान आवै तिहिपासा॥
परसत होवे भसम पतंगा । अनजाने जरि परहि मतंगा ॥
ज्योतिस्वरूपकाल अस आही। कठिनकाल यह छांडत नाहीं
कोटि विष्णु औतारहि खाया। ब्रह्मा रुद्रहि खाय नचाया ॥
कौन विपति जीवनकी कहऊँ। परखि वचन निज सहजहि रहऊँ
लाख जीव वह नित्यहि खाई। असविकरालसोकालकसाई ॥

धर्मदास वचन

धर्मदास कह सुनहुँ गुसाई । मोरे चित्त संशय असआई ॥
अष्टंगीहि पुरुष उत्पानी । जिहिविधि उपजी सो मैं जानी॥

पुनि वहि ग्रास लीन्ह धमराई। पुरुष प्रताप सु बाहर आई ॥
सो अष्टंगीहि असछल कीन्हा। गोइसि पुरुष प्रगटयम कीन्हा॥
पुरुष भेद नहिं सुनन बतावा। कालनिरञ्जन ध्यान करावा ॥
यह कस चरित कीन्ह अष्टंगी। ताजा पुरुष भइकाल किसंगी॥

सद्‌गुरु वचन

धर्म सुनहु जन नारि सुभाऊ। अब तुहि प्रगटवरणिसमझाऊ॥
होय पुत्री जेहि घर माहीं। अनेक जतन परितोषै ताहीं॥
वस्त्र भक्ष सुख सेज निवासा। घरबाहर सब तिहि विश्वासा॥
यज्ञ कराय देय पितु माता। बिदाकीन्हहितप्रीतिसों ताता॥
गयी सुता जब स्वामी गेहा। रात्या तासु संग गुण नेहा ॥
माता पिता सबै बिसरावा। धर्मदास अस नारि स्वभावा॥
ताते अद्या भई बिगानी। काल अंग ह्वै रही भवानी ॥
ताते पुरुष प्रगटने लायी। कालरूप विष्णुहि दिखलायी॥

धर्मदासवचन कबीर प्रति

हे साहब यह जान्यो भेदा। अब आगेका करहु उछेदा ॥

कबीर वचन धर्मदास प्रति

पुनि माता कहि विष्णु दुलारा। मरद्यो मान जेठ निजबारा ॥
अहो विष्णु तुम लेहु अशीशा। सब देवनमें तुमहीं ईशा ॥
जो इच्छा तुम चितमें धरिहौं। सो तब तोर काज मैं करिहौं॥

मायाका विष्णुको सर्वप्रधान बनाना

प्रथम पुत्रब्रह्म दुरि गयऊ। अकरमझूठिताहि प्रिय भयऊ॥
देवन श्रेष्ठ तुमहिं कहँ मातहिं। तुम्हारी पूजा सब कोई ठानहिं॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

कृपा वचन अस मातै भाखा। सबते श्रेष्ठ विणुकह राखा ॥
माता गयी रुद्रके पासा। देख रुद्र अति भये हुलासा॥

अष्टाका महेशको बरदान देना

पुनि लहुरा कहँ पूछे माता । तुम शिव कहो हृदयकी बाता॥
माँगहु जो तुम्हरे चित भावे । सो तोहि देऊ माता फुरमावे॥
दोउ पुत्रन कहँ मात दृढावा । माँग महेश जो मनभावा॥

महेशवचन

जोरि पानि शिवकहबे लीन्हा। देहु जननि जो आज्ञा कीन्हा॥
कबहिं न विनसे मेरी देही । हे माता मागों वर एही॥
हे जननी यह कीजै दाया । कबहु न विनशै मेरी काया॥

अष्टावचन

कह अष्टंगी अस नहीं होई । दूसरा अमर भयो नहिं कोई॥
करहु योग तप पवन सनेहा । रहै चार युग तुम्हरी देहा॥
जौलौं पृथ्वी अकाश सनेही । कबहु न बिनशै तुम्हरी देही॥

धर्मदासवचन

धर्मदास विनती चित्त लाई । ज्ञानि मोहि कहो समुझाई॥
यह तो सकल भेद हम पायी । अब ब्रह्माको कहो उथायी॥
अष्टा शाप ताहि कहँ दीन्हा । तेहि पीछे ब्रह्मा कस कीन्हा॥

कबीर वचन

विष्णु महेश जबै वर पाये । भये आनन्द अतिहि हरषाये॥
दोनों जने हरख मन कीन्हा । ब्रह्मा भयो मान मद हीना॥
धर्मदास मैं सब कुछ जानों । भिन्न भिन्न कर प्रगट बखानों॥

शाप पानेके कारण दुःखित हो ब्रह्मा विष्णुके पास जाकर
अपना दुःख कहना और विष्णुका उसे आश्वासन देना

ब्रह्मा मनमें भयो उदासा । तब चलि गयो विष्णुके पासा॥

ब्रह्मावचन विष्णुप्रति

जाय विष्णुसे बिन्ती ठाना । तुम हो बंधु देव परधाना॥
तुम पर माता भई दयाला । शाप विवश तुम भये बिहाला॥

निज करनी बल पायेहो भाई। किहि विधि दोष लगाऊँ माई॥
अब अस जतन करो हो भ्राता। चले परिवारे वचन रहै माता॥

विष्णुवचन

कहै विष्णु छोड़ो मन भंगा। मैं करिहौं सेवकाई संगा॥
तुम जेठे हम लहुरे भाई। चित संशय सब देहु बहाई॥
जो कोइ होवे भक्त हमारा। सो सेवै तुम्हारो परिवारा॥

छन्द

जगमाहि एस दिढाई हौं फलपुन्य आशा जो यहो॥
यज्ञ धर्म रु करे पुजा द्विज बिना नहिं होय हो॥
जो करे सेवा द्विजनकी तेहि महापुण्य प्रभावहो॥
सो जीवमोकहँअधिकप्यारेराखिहौं निज ठाँवहो३१

कबीरवचन धर्मदासप्रति

सो०–ब्रह्मा भये अनंद, जबहि विष्णु असभाषेऊ॥
मेटेउ चितकर द्वंद्व, सखा मोर सब सुखीभौ॥३२॥

कालप्रपंच

देखहु धर्मनि काल पसारा। इन ठग ठग्यो सकल संसारा॥
आशा दै जीवन बिलपावै। जन्म जन्म पुनि ताहि सतावै॥
बलि हरिचंद बेनु बइरोचन। कुंती सुत औरौ महिसोचन॥
ये सब त्यागी दानि नरेशा। इन कहँ ले राखे केहि देशा॥
जस गंजत इन सबकी कीन्हा। सो जग जानेकाल अधीना॥
जानत है जग होय न शुद्धी। कालअमरबलसबकीहरबुद्धी॥
मन तरंगमें जीव भुलाना। निजघर उलटिनचीन्ह अजाना॥

धर्मदास वचन

धर्मदास कह सुनो गुसांई। तबकी कथा मोहि समुझाई॥
तुम प्रसाद जमको छल चीन्हा। निश्चय तुम्हरे पदचित दीन्हा॥

भव बूड़त तुमसी गहि राखा। शब्द सुधारस मोसन भाखा॥
अब वह कथा कहो समुझाई। शाप अंत किया कौन उपाई॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति गायत्रीके अद्याको शाप देनेका वृतान्त

धर्मनि तुम सन कहों बखानी। भाषो ज्ञान अगमकी बानी॥
मातु शाप गायत्री लीन्हा। उलटि शाप पुनिमातहिं दीन्हा
हम जो पांच पुरुषकी जोई। पांचोंकी तुम माता होई॥
बिना पुरुषकी तू जिनि है बारा। सो जानही सकल संसारा॥
दुहुन् शाप फल पायो भाई। उगरह भयो देह धरि आई॥

जगतकी रचनाका विशेष वृत्तान्त

यह सब द्वंद्व बाद है गयऊ। तब पुनि जगकी रचना भयऊ
चौरासी लख योनिन भाऊ। चार खानि चारिहु निरमाऊ॥

छन्द

प्रथम अंडज रच्यो जननी, चतुरमुख पिण्डज कियो॥
विष्णु उष्मज रच्यो तबहीं, रुद्र स्थावर लियो॥
लीन्ह रचि जेहि खानि चारों, जीव बंधन दीन्हहो॥
होन लागी कृषीकारण, करण कर्ता चीन्हहो॥
सो०-यहि विधि चारो खानि, चारहु दिशि विस्तार किया
धर्मदास चित जान, वाणी चारि उचारको॥३३॥

धर्मदास वचन कबीरप्रति

धर्मनि कहैं जोरि युग पानी। तुम सद्गुरु यह कह्यो बखानी॥
चार खानिकी उत्पति भाऊ। भिन्न भिन्न मुहि वरणि सुनाऊ॥
चौरासी लख योनिन धारा। कौन योनि केतिक बिस्तारा॥

चार खानकी गिनती। कबीरवचन धर्मदास प्रति

कह कबीर सुन धर्मनि बानी। योनि भाव तोहि कही बखानी॥
भिन्न भिन्न सब कहु समुझाऊं। तुमसे अन्त न कछू दुराऊं॥
तुम जिन शंका मानहु भाई। वचन हमार गहो चितलाई॥

चौरासी लाख योनिकी गिनती

नौ लख जलके जीव बखानी । चौदह लाख पक्षी परवानी ॥
किरम कोट सत्ताइस लाखा । तीन लाख अस्थावर भाखा ॥
चतुर लक्ष मानुष परमाना । मानुष देह परम पद जाना ॥
और योनि परिचय नहिं पावे । कर्म बंध भव भटका खावे ॥

मनुष्य खानि सबते अधिक क्यों है ? धर्मदासवचन

धर्मदास नायो पद शीशा । यह समुझाय कहो जगदीशा ॥
सकलयोनि जिव एकसमाना । किमिकारणनहिंइकसमज्ञाना ॥
सो चरित्र मुनि कहौ बुझाई । जाते चित संशय मिटिजाई ॥

सद्गुरुवचन

सुनु धर्मनि निज अंश अभूषण ।तोहि बुझाय कहौं यह दूषण ॥
चार खानि जिव एकै आहीं । तत्त्व विशेष अहैं सुन ताहीं ॥
सो अब तुमसों कहों बखानी । तत्त्व विशेष अहैं सुन ताहीं ॥
ऊष्मज दोय तत्त्व परमाना । अंडज तीन तत्त्व गुण जाना ॥
पिण्डज चार तत्त्वगुण कहिये। पांच तत्त्व मानुष तन लहिये ॥
तासों होय ज्ञान अधिकारी । नरकी देह भक्ति अनुसारी ॥

किन २ खानिमें कौन २ तत्त्व है । धर्मदासवचन कबीरप्रति

हे साहिब मुहि कहु समुझाई ।कौन कौन तत्त्व इन सब पाई ॥
अंडज अरु पिंडजके संगा । ऊष्मज और अस्थावर अंगा ॥
सोसाहिब मोहिवरणिसुनाओ। करो दया जनि मोहिदुराओ ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति छन्द

सतगुरु कहें सुन दास, धर्मनि तत्त्वखानिनिबेरनो ॥
जाहि खानि जो तत्त्व दीन्हों,कहों तुमसो टेरनो ॥

---

१ इस पदको कई प्रतियोंमें लिखा है ।
सकल जिवन जिव एक समाना । नर सब औरनको नहि ज्ञाना

खनिअण्डज तीन तत्त्व हैं, आप वायु अरु तेजहो॥
अचल खानी एकतत्त्वहि, तत्त्वजलका थेगहो३३॥
सो०–ऊष्मज तत हैं दोय, वायु तेज समजानिये॥
पिंडज चारहिं सोय,पृथ्वी तेहि अपवायुसम ॥३४॥
पिंडज नर परधान, पांच तत्त्वतेज संग है॥
कहै कबीर परमान, धरमदास लेहुपरखिके ॥३५॥
पिंडज नरकी देह सँवारा। तामें पांच तत्त्व विस्तारा॥
ताते ज्ञान होय अधिकाई। गहै नाम सत लोकहिं जाई॥

सब मनुष्योंका ज्ञान एक समान क्यों नहीं ? धर्मदास वचन

धर्मदास कह सुनु बन्दी छोरा। इक संशय मेटो प्रभु मेरा॥
सब नर नारि तत्त्व सम आहीं। इक सम ज्ञान सबनको नाहीं॥
दया शील संतोष क्षमा गुनन। कोई शून्य कोइ होय सम्पूरन॥
कोई मनुष्य होय अपराधी। कोईशीलतलकोईकालउपाधी॥
कोई मारि तन करे अहारा। कोई जीव दया उर धारा॥
कोई ज्ञान सुनत सुख माने। कोई काल गुणवाद बखाने॥
नाना गुण किहि कारण होई। साहिब बरणि सुनावो सोई॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

धर्मदास परखो चित लाई। नरनारी गुण कहूँ बुझाई॥
जानते नर है ज्ञानी अज्ञानी। सो सब तोहि कहों सहिदानी॥
नाहर सर्प औ स्वान सियारा। काग गिद्ध सूकर मंजारा॥
और अनेकजो इन अघखानी। खाहि अखजअधमगुणजानी॥
इन जो इतने जे जिव आवा। नरकी जोन जन्म जिन पावा॥
पीछे जो इन सुभावन छूटे। कर्म प्रधान महापुन छूटे॥
ताते सब चले कागके लेखे। नरकी देह परगट तेहि देखे॥

जिहि जो इतने जो नर आऊ। ताको तैसो आहि सुभाऊ ॥
अघकरमी घातक विष पूजा। जो इन प्रभाव होय नहिं दूजा ॥

योनिप्रभाव मेटनेका

सतगुरु मिले तो ज्ञान लखावै। काग दशा तब सब बिसरावै ॥
मुरचा जो इन छूटै तब भाई। ज्ञान मसकला फिरे बनाई ॥
जब धोबी वस्तर कहँ धोवे। जससाबुन मिल उज्वल होवे ॥
थोर मैल कर वस्तर माही। थोड़े परिश्रम मैल नसाई ॥
निपट मलिनजे वस्तर आही। ताकहँ अधिक अधिक श्रम चाही ॥
जैसे मैल वस्तर कर भाऊ। ऐसे जीवन करे सुभाऊ ॥
कोइ कोइ जो अंकुर होई। स्वल्प ज्ञान सो गहे विलोई ॥

धर्मदास वचन

यह तो स्वल्प जोनि करलेखा। खानि भाव अब कहूँ विशेषा ॥
चारि खानिको जिव है जोई। मनुष्य खानमहँ आवे सोई ॥
ताकर लच्छन मोहि बताओ। विलगबिलगकरिमुहिसमझाओ
जेहि परखी मुदहिं महँ चेतू। कर अब साहब यहि बड़ हेतू ॥

चारि खानिके लक्षणोंकी पारख । कबीरवचन

धर्मदास परखहु चित लायी। चारिखानिगुणकहुँसमुझायी ॥
चारों खानि जीव भरमाया। तब ले नरकी देह धराया ॥
देह धरे छोड़े जस खाना। तैसे ता कहँ ज्ञान बखाना ॥
लच्छन औ अपलच्छन भेदा। सो सब तुमसौं कहौं निषेदा ॥

अण्डजखानसे मनुष्यदेहमें आये हुए जीवकी पारख

प्रथम कहों अण्डजकी बानी। एकहिं एक कहों बिलछानी ॥
आलस निद्रा जा कहँ होई। काम क्रोध दारिद्री सोई ॥
चोरी चंचल अधिक सुहाई। तृष्णा माया अधिक बढ़ाई ॥
चोरी चुगुली निन्दा भावे। घर बनझाड़ी अगिन लगावे ॥
रोवे कूंदे मंगल गावे। भूत प्रेत सेवा मन भावे ॥

देखत देत और पुनि काहू । मन मन झंखे बहु पछताहू ॥
वाद विवाद सबसों ठाने । ज्ञान ध्यान कछु मनहिं न आने ॥
गुरुसतगुरु चीन्हें नहिं भाई । वेद शास्त्र सब देइ उठाई ॥
आपन नीच ऊंच मन होई । हमसमसरि दूसर ना कोई ॥
मैले बस्तर नहीं नहाई । आंख कीन मुख लार बहाई ॥
पांसा जुवा चित्त मन आने । गुरुचरणननिशिदिननहिंजाने ॥
कुबरा मूड़ ताहिका होई । लंबा होय पाव पुनि सोई ॥

छन्द

यहि भांतिलक्षणमैं कहा, तुम सुनहु धर्मनि नागरू ॥
अंडज खानिन गोयराखा, कह्यो भेद उजागरू ॥
यहखानि वर्णन कहों तोसों, कछु नाहि छिपायऊ ॥
सोसमुझावानीजीवथिरकै, धोखसकलमिटायऊ ३४

उष्मज खानिसे मनुष्य देहमें आये हुये जीवनकी पारख

सोरठा–दूजीखानि बताय, ताहि लक्ष तोसों कहो ॥
उष्मजते जिय आय, नर देही जिन पाइय ॥ ३६ ॥

कहैं कबीर सुनो धर्मदासा । उषमज भेद कहौं परगासा ॥
जाइ शिकार जीव बहु मारे । बहुतसे आनन्द होयतेहिवारे ॥
मारि जीव जब घरकहँ आयी । बहुविधि रांध ताहि कहँ खाई ॥
निन्दे नाम ज्ञान कह भाई । गुरु कहँ मेठि करे अधिकाई ॥
निन्दे शब्द और गुरु देवा । निन्दे चौका नरियर भेवा ॥
बहुत बात बहुतेनरि आयी । कथे ज्ञान बहुते समुझायी ॥
झूठे वचन सभामें कहई । टेढ़ी पाग छोर उरमहई ॥
दया धरम मनहीं नहिं आवे । करें पुन्य तेहि हांसी लावे ॥
माल तिलक अरु चन्दन करई । हाट बजार चिकन पट फिरई ॥

अन्तर पापी ऊपर दाया । सो जिव यमके हाथ विकाया ॥
लंब दांत अरु वदन भयावन । पीरे नेत्र ऊँच अति पावन ॥

छन्द

कहे सतगुरु सुनहु धर्मनि, भेद भल तुम पाइया ॥
सतगुरु विना नहिंभेदपावे, भलीविधितोहिदरसाइया
भेंटिया तुम मोहिको, कछु नाहि तोहि दुराइहौं ॥
जो बूझिहो तुम मोहिसो, सकलभेद बताइहौं ॥३५॥

स्थावर खानिसे मनुष्य शरीरमें आये हुए जीवनकी पारख

सो०-तीजीखानि सुभाव अचलखानि जेहि कहत
नरदेही तिनपाव, ताकर लक्षण अब बताइहौं॥३७॥

अचल खानिको कहो सँदेसा। देह धरे जस होवें भेसा ॥
छनिक बुद्धि होवे जिव केरी । पलटत बुद्धि न लागे बेरी ॥
झङ्गा फेटा सिर पर पागा । राज द्वार सेवा भल लागा ॥
घोड़ा पर होवे असवारा । तीन खरग औ कमरकटारा ॥
इत उत चित सैन जो मरई । पर नारी करि सैन बुलवाई ॥
रससों बात कहें मुख जानी । काम बान लागे उर आनी ॥
पर घर ताकइ चोरी जायी । पकर बांधि राजा पहँलायी ॥
हांसी करे सकल पुनि जगहूँ । लाज शर्म उपज नहिं तबहूँ ॥
छिन इक मन महँ पूजा करई । छिन इकमन सेवा चितधरई ॥
छिन इक मन महँ बिसरे देवा । छिन इक मनमहँकीजै सेवा ॥
छिन इक ज्ञानी पोथी बांचा । छिन इकमांहिसबनघरनाचा ॥
छिन इक मनमें सूर कहोई । छिन इकमें कादर हो सोई ॥
छिन इक मनमें साहु कहाई । छिन इक मनमें चारि लगाई ॥
छिन इक मनमें करे जु धर्म्मा । छिन इक मनमें करे अकर्म्मा ॥

भोजन करत साथ खजुआई । बाँह जाँघ पुनि मींजत भाई॥
भोजन करत सोय पुनि जाई । जो जगाय तिहि मारन धाई॥
आंख लाल होहिं पुनि जाकी । कहँलग भेद कहों मैं ताकी॥

छन्द

अचलखानीभेद धर्मनि, छिनक बुद्धि सो होयहो ॥
छिन माहिं करके मेट डारे, कहों तुमसों सोयहो॥
मिले सतगुरु सत्य जा कहँ, खान बुधिसबमेटही॥
गुरुचरणलीन अधीन होवै, लोकसोहँसापैंठही॥३६॥

पिंडज खानिसे मनुष्य शरीरमें आये हुए जीवनकी पारख

सोरठा-सुनहु हो धरमदास,पिंडज लक्षणगुणकहो॥
कहों तुम्हारे पास चौथीखानिकी युक्तिसो ॥ ३७ ॥
पिंडज खानिके लच्छ सुनाऊँ। गुण अवगुणका भेद बताऊँ ॥
वैरागी उनमुनि मत धारी । करे धर्म पुनि वेद विचारी ॥
तीरथ औ पुनि योग समाधी । गुरूके चरणचित्तभलबाँधी ॥
वेद पुराण कथे बहु ज्ञाना । सभा बैठि बातें भल ठाना ॥
राजयोग कामिनी सुख माने । मनशंका कबहूँ नहिं आने ॥
धन संपति सुख बहुत सहायी। सेज सुपेद पलंग बिछायी ॥
उत्तम भोजन बहुत सुहायी । लौंग सुपारी बीसों खायी ॥
खरचे दाम पुन्य महँ सोई । हिरदे सुधि ताकर पुनि होई॥
चच्छु तेज जाकर पुनि जानी। पराक्रम देही बल ठानी ॥
देखो स्वर्ग सदा तेहि हाथा । देखे प्रतिमा नावे माथा ॥

छन्द

बहुतलीन आधीन धर्मनि, ताहि जितकहँजानिहो॥
सतगुरुचरणनिशिदिनगहे, मतशब्दनिश्चयमानिहो॥

एक एक बिलोय धर्मनि, कह्यो सत मैं तोहिसों ॥
चारखानी लक्ष भाषेउँ, सुनो आगे मोहिसों ॥३८॥

मनुष्य शरीरसे मनुष्यदेहमें आनेवाले जीवकी पारख

सोरठा–छूटे नरकी देह, जन्म धरे फिर आयके ॥
ताका कहौ सँदेह,धर्मदास सुनु कानदे॥३९॥

धर्मदासवचन

हे स्वामी इक संशय आयी ।सो पुनि मोहि कहो समझाई॥
चौरासी योनिन भरमावे । तब मानुष की देही पावे ॥
यह विधि मोसन कह्यो बुझायी। अब कैसे यह संधि लखायी॥
सो चरित्र गुरु मोहि लखाऊ । धर्मदास गहि ठेके पाऊ ॥
मानुष जन्म धरे पुनि आयी । लक्षण तासु कहो समझायी॥

कबीरवचन

धर्मदास तुम भलिविधि जानो। होय चरित सो भले बखानो॥

आयु रहते भी मृत्यु होती है

आइ अछत जो नर मर जायी। जन्म धरे मानुषको आई ॥
जो पुनि मूरख ना पतियाई । दीपक बाती देख जराई ॥
बहुविधि तेल भरे पुनि ताही। लागै वायु तबै बुझ जाही ॥
अग्नि लायके ताहि लेसावे । यहिविधि जीवहु देह धरावे॥
ताको लक्षण सुनहु सुजाना । तुमसों न गोय राखूँ ज्ञाना ॥
शूरा होवे नरके माहीं । भयउ डरताके निकट जाहीं॥
माया मोह ममता नहिं व्यापे ।दुश्मन ताहि देखि डरकांपे ॥
सत्य शब्द प्रतीति कर माने। निन्दा रूप न कबही जाने ॥
सतगुरु चरण सदा चितराखे। प्रेम प्रीतिसो दीनता भाखे ॥
ज्ञान अज्ञान होइ कहँ बूझे ।सत्यनाम परिचय नित सूझे॥
जो मानुष अस लक्षण होई । धर्मदास लखि राखो सोई ॥

छन्द

जनमजनमको मैल छूटे, पुरुष शब्द जो पावई ॥
नाम भा सुमिरण गहे सो, जीव लोक सिधावई ॥
गुरुशब्द निश्चय दृढगहेसो, जीव अमियअमोलहो
सतनामबल निज घर चले,करे हंसकलोलहो॥२८॥
सोरठा–सत्यनामपरताप, काल न रोके जीवकहँ ॥
देखिवंशको छाप, काल रहै सिर नायके ॥ ४०॥

चौरासी धार क्यों बनी ? धर्मदासवचन

चारि खानिके बूझेउ भाऊ। अब बूझों सो मोहि बताऊ॥
चौरासी योनिनकी धारा। किहकारण यहकीन्हपसारा॥
नर कारण यह सृष्टि बनाई। कै कोह और जीव भुगताई॥
हे साहिब जनि मोहि दुराओ। कीजे कृपाबिलंबजनिलाओ॥

मनुष्यके लिये चौरासी बनी है सद्‌गुरुवचन

धर्मनि नर देही सुखदायी। नर देही गुरु ज्ञान समाई ॥
सो तनु पाय आप जहँ जावे। सतगुरुभक्ति विनादुख पावे॥
नर तनु काज कीन्ह चौरासी। शब्द न गहे मूढ़मतिनाशी॥
चौरासीकी चाल न छाड़े। सत्य नाम सो नेह न माड़े॥
लै डारे चौरासी माहीं। परचै ज्ञान जहां कछु नाहीं ॥
पुनिपुनि दौड़ि कालमुखजाहीं। ताहूते जिव चेतत नाहीं ॥
बहुत भांतिते कहि समुझावा। जीवत बिपति जान गुहरावा॥
यह तनु पाय गये सतनामा। नामप्रताप लहे निजधामा ॥

छन्द

आदिनाम विदेह अस्थिर,परखि जो जियरा गहे॥
पाय बीरा सार सुमिरण, गुरु कृपा मारग लहे ॥

तजिकागचाल मराल पथगहि, नीरक्षीरनिवारिके ॥
ज्ञानदृष्टिसोअदृष्टि देखे, क्षरअक्षरसुविचारिके॥२९॥
सोरठा-निह अक्षर है सार, अक्षरतै लखि पावई ॥
धर्मनि करो विचार निह अक्षर निहतत्त्व है ॥४१॥

धर्मदासवचन

धर्मदास कहे शुभ दिन मोरा । हे प्रभु दरसन पायउँ तोरा ॥
मुहि किंकर पर दाया कीजे । दास जानि मोहि यहु बरदीजे॥
निशिदिन रहो चरण लौलीना । पल इक चित्त न होवे भीना॥
तुव पदपंकज रुचिर सुहावन । पद परागबहुपतितन पावन॥
कृपासिंधु करुणामय स्वामी । दया कीन्ह मोहि अंतरयामी॥
हे साहिब मैं तव बलिहारी । आगल कथा कहो निरवारी॥
चारखानि रचि पुनिकसकीन्हा। सो सब मोहि बतावो चीन्हा॥

जीवोंके लिये कालका फन्दा रचना । कबीरवचन

सुनु धर्मनि यह है यमबाजी । जेहि नहिं चीन्हे पंडितकाजी॥
जा यम ताहि गोसइयां भाखे। तजे सुधा नर विषकहँ चाखे ॥
चारिहु मिलि यह रचना कीन्हा। कच्चा रंग सु जीवहि दीन्हा॥
पांच तत्त्व तीनों गुण जानो । चौदह यम ता संग पिछानो ॥
यहि विधि कीन्ही नरकीकाया। मरे खाय बहुरि उपजाया ॥
ओंकार है वेदको मूला । ओंकारमें सब जग भूला ॥
है ओंकार निरंजन जानों । पुरुष नाम सो गुप्त अमानो॥
सहस अठासी ब्रह्मा जाया । भा विस्तर कालकी छाया ॥
ब्रह्माते जिव उपजे बारा । तिन पुनि कथे बहुत विस्तारा॥
स्मृति शास्त्र पुराण बखाना । तामें सकल जीव उरझाना॥
जीवनको ब्रह्मा भटकावा । अडखनिरंजन ध्यान दृढावा॥

वेद मते सब जिव भरमाने । सत्य पुरुषको मर्म न जाने॥
निरंकार कस कीन्ह तमासा । सो चरित्र बूझो धर्म दासा॥

छन्द

असुर ह्वै जीवन सतावे, देव ऋषि मुनि कारकं ॥
पुनि धरि औतार रक्षक, असुर करै संहारकं ॥
जीवको दिखलाय लीला, अपनी महिमा घनी ॥
यहिजानजीवनबांधिआशा, यही है रक्षक धनी४०
सो०–रक्षककला दिखाय, अन्तकाल भक्षण करे ॥
पीछे जिव पछताय, जबहि कालके मुख परे ॥४२॥

अडसठ तीरथ ब्रह्मा थापा । अकरम करम पुण्य औ पापा॥
बारहराशि नखत सत्ताइस । सात वार पंद्रह तिथि लाइस॥
चारों युग तब बांधे तानी । घड़ी दंड स्वासा अनुमानी॥
कार्तिक माघ पुन्य कहि दीन्हा । यमबाजी कोइ बिरले चीन्हा॥
तीरथ धामकी बांधि महातम। तजे न भरम न चीन्हे आतम॥
पाप पुण्यमहँ सबै फँदावा । यहि विधि जीव सबै उरझावा॥
सत्य शब्द विनु बांचे नाहीं । सारशब्द बिन यममुख जाहीं॥
त्रास जानि जिव पुण्य कमावे । किंचित फल तेहि छुधा न जावे॥
जबलग पुरुष डोर नहिं गहई । तब लग योनिन फिर२लहई॥
अमित कला जम जीव लगावे। पुरुष भेद जीव नहिं पावे ॥
लाभ लोभ जिव लागे धायी । आशा बंध काल धर खायी॥
यम बाजी कोइ चीन न पावे । आशा दे यम जीव नचावे ॥
प्रथमैं सतयुगको व्यवहारा । जीवहि यम लै करे अहारा॥
लच्छ जीव यम नितप्रति खाई। महाअपरबल काल कसाई ॥
तप्तशिलानिशिदिन तहँ जरई। तापर लै जीवन कहँ धरई ॥

जीवहि जारे कष्ट दिखावे । तब फिर लै चौरासी नावे ॥
ता पीछे योनिन भरमावे । यहि विधि नानाकष्ट दिखावे॥
बहुविधि जीवन कीन्ह पुकारा। काल देत है कष्ट अपारा ॥

तप्त शिलापर कष्ट पाकर जीवोंका गुहार करना और कबीर साहबका सतपुरुषकी आज्ञासे जाकर उन्हे छुड़ाना

यमकर कष्ट सह्यो नहिं जाई। हे गुरु ज्ञानी होहु सहाई ॥

छन्द

जबदेखिजीवनकोविकल अतिदया पुरुषजनाइया ॥
दयानिधि सत पुरुषसाहिब, तबै मोहि बुलाइया ॥
कहे मुहिं समुझाय बहुविधि, जीवजाय चितावहू ॥
तुम दरशदेतेहो जीव शीतल,जायतपनबुझायहू ४१॥
सोरठा–आज्ञालीन्हामान,पुरुषसिखापनसीसधरि ॥
ताक्षण कीन्ह पयान, सीसनायसतपुरुष कहँ ॥४२॥
आये जहँ यम जीव सतावे । काल निरंजन जीव नचावे ॥
चटपट करे जीव तहँ भाई । ठाढ़े भये तहां पुनि जाई ॥
मोहि देख जिव कीन्ह पुकारा । हे साहिब मुहि लेहि उबारा॥
तब हम सत्य शब्द गुहरावा । पुरुष शब्दते जीव जुड़ावा ॥

जीवोंका स्तुति करना

सकल जीव तब अस्तुति लाये। धन्य पुरुष भल तपन बुझाये॥
यमते छोर लेव तुम स्वामी । दया करो प्रभु अन्तरयामी ॥

कबीरवचन जीवोंप्रति

तब मैं कहा जीव समुझाई । जोर करो तो वचन नसायी॥
जब तुम जाय धरौ जग देहा । तब तुम करिहो शब्द सनेहा॥
पुरुष नाम सुमिरण सहिदाना। बीरा सार कहो परवाना ॥
देह धरी सत शब्द समाई । तब हंसासत लोकै जाई ॥

जहां आशा तहां बासा

जहँ आशा तहँ बासा होई। मनवच करम सुमिर जो कोई॥
देह धारि कीन्हे जिहि आसा। अंत आय लीन्हेउ तहँ बासा॥
जब तुम देह धरो जग जाई। बिसरचो पुरुषकाल धरिखाई॥

जीवन वचन कबीर प्रति

कहे जीव सुनु पुरुष पुराना। देह धरी बिसरचो यह ज्ञाना॥
पुरुष जान सुमरेउ यमराई। वेद पुराण कहे समुझाई॥
वेद पुराण कहे पति एहा। निराकार ते कीजे नेहा॥
सुर नर मुनि तेतीस करोरी। बांधे सबै निरंजन डोरी॥
ताके मते कीन्ह मैं आसा। अब मोहि चीन्ह परे यम फांसा॥

कबीर वचन जीवोंप्रति

सुनो जीव यह छल मम केरा। यह यम फंदा कीन्ह घनेरा॥

छन्द

काल कला अनेक कीन्हों, जीव कारण ठाट हो॥
तीर्थव्रत जग योग फन्दे, कोइ न पावत बाट हो॥
आप तन धरि प्रगट ह्वैके सिफत आपन कीन्हेऊ॥
नानागुणनमन कर्म कीन्हे, जीव बंधन दीन्हेऊ॥४२॥
सोरठा—कालकराल प्रचण्ड, जीवपरे वश ताहिके॥
जनम जनमभे दण्ड, सत्यनाम चीन्हे विना ४४

---

१ यह छन्द कई ग्रंथोंमें कई प्रकारसे लिखा है दूसरे प्रकारसे जो दो सौ वर्षसे भी अधिकके लिखे पुराने ग्रंथ में इस प्रकार है--

छन्द-काल कन्या अनेक कीन्हे जीव कारण जाल हो।
वेद शास्त्र पुरान स्मृति ते रुधें काल कराल हो।
देव धरि नर प्रगट हो फ़िरे, ताहि आशा कीन्हेऊ,
भ्रमत इत उत काल वसि, बहुपंथमें चित दीन्हेऊ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

छन इक जीवन कहँ सुख दयऊ । जीव प्रबोध पुरुष पहँ गयऊ ॥
छन इक जीवन कहँसुख दीन्हा । जीवन कह्यो ज्ञानको चीन्हा ॥
जब तुम देह धरो जग जाई । तब हम शब्द कहब गोहराई ॥
जौ गहि हो सत नामकी डोरी । तब आनब हम जमसे छोरी ॥
जीव परमोधि पुरुषपहँ गयऊ । जीवनको दुख वरनि सुनयऊ ॥
पुरुषदयाला दयानिधि स्वामी । जिनके मूल अमान अकामी ॥
कह्यो मोहिं बहुविधि समुझाई । जीवन आनों शब्द चेताई ॥

धर्मदासवचन

धर्मदास अस विनती लायी । ज्ञानी मोहिं कहो समझायी ॥
जो कछु पुरुषशब्दसुख भाखो । सो साहिब मोहि गोय न राखो ॥
कौन शब्दते जीव उबारा । सो साहिब सब कहो बिचारा ॥

सद्गुरुवचन

पुरुष मोहि जैसे फुरमायी । सो सब तुमसों संधि लखायी ॥
कहेउ मोहिबहुविधिसमझायी । जीवहि आनो शब्द चितायी ॥
गुप्त वस्तु प्रभु मोकहँ दीन्हा । नाम विदेह मुक्तिकर चीन्हा ॥
दीन्ह पात परवाना हाथा । संधिछाप मोहि सौंप्यो नाथा ॥
बिनु रसनाते सो धुनि होई । गुरुगमते लखि पावे कोई ॥
पंच अमीय मुक्तिका मूला । जाते मिटे गर्भ अस्थूला ॥
यहि विधि नाम गहे जो हंसा । तारौ तासु इकोतर बंसा ॥
नाम डोरि गहि लोकहि जायी । धर्मराय तिहि देखि डरायी ॥
ज्ञानी करो शिष्य जेहि जाई । तिनका तोरो जल अँचवाई ॥
जिहिविधिदीन्ह तुमहिमें पाना । तेहिविधिदेहुशिष्य सहिदाना ॥

गुरुमहिमा

गुरुमुख शब्द सदा उर राखे । निशिदिन नामसुधारस चाखे ॥
पियानेह जिमि कामिनि लागे । तिमिर गुरुरूप शिष्य अनुरागे

पल पल निरखे गुरुमुखकान्ती । शिष्यचकोरगुरूशशिशान्ती ॥
पतिव्रता ज्यों पतिव्रत ठाने । द्वितीय पुरुष सपने नहिं जाने ॥
पतिव्रता दोउ कुलहिं उजागर । यह गुण गहे संतमति आगर ॥
ज्यों पतिव्रता पिया मन लावे । गुरु आज्ञा असशिष्य जुगावे ॥
गुरुते अधिक और कोइ नाहीं । धर्मदास परखहु हिय माहीं ॥
गुरुते अधिक कोइ नहिं दूजा । भर्म तजै करि सतगुरुपूजा ॥
तीर्थ धाम देवल अरु देवा । शीश अर्पि जो लावैं सेवा ॥
तो नहिं वचन कहें हितकारी । भूले भरमें यह संसारी ॥

छन्द

गुरु भक्ति अटल अमानधर्मनि, यहि सरस दूजा नहीं ॥
जप योगतप व्रतदान पूजा, तृणसदृश यह जग कहीं ॥
सतगुरुदया जिहिसन्तपर तिहि, हृदययहिविधि आवई ॥
ममगिरापरखेहरषिकेहिय, तिमिरमोहनशावई ॥ ४३ ॥
सोरठा-दीपकसतगुरुज्ञान, निरखेहु सन्तअंजोरतोहि
पावे मुक्ति अमान, सतगुरु जेहि दाया करे ॥ ५४ ॥

शुकदेवजीकी कथा

शुकदेव भये गरभ जोगेशर । उन समान नहिं थाप्यो दूसर ॥
तपके तेज गये हरि धामा । गुरु बिन नहीं लहे विश्रामा ॥
विष्णु कहे ऋषि कहँवा आये । गुरु विहीन तप तेज भुलाये ॥
गुरु विहीन नर मोहि न भावे । फिर २ जो इन संकट आवे ॥
जाहु पलटि गुरु करहु सयाना । सब पैहौ यहवां अस्थाना ॥
सुनिमुनि शुकदेव वेगि सिधाये । गुरुविहीन तहँ रहन न पाये ॥
जनक विदेह कीन्ह गुरुजानी । हरषि मिले तब सारंगपानी ॥
नारद ब्रह्मा सुत बड़ ज्ञानी । यह सब कथा जगतमें जानी ॥

और देव ऋषि मुनिवर जेते । जिन गुरुलीन्ह उतर सो तेते॥
जो गुरु मिले तो पंथ बतावे। सार असार परख दिखलावे॥
गुरु सोई जो सत्य बतावे । और गुरु कोइ काम न आवे॥
सत्य पुरुषके कहे सँदेशा । जन्म जन्मका मिटै अँदेशा॥
पाप पुन्यकी आशा नाहीं । बैठे अक्षय वृक्ष की छांहीं ॥
भृङ्गी मत होवे जिहि पासा । सोइ गुरुसत्य सुनो धर्मदासा॥

छन्द

जो रहित घर बतलावई, सो गुरु सांचा मानिये ॥
तीन तजि मिलि जाय चौथ,तासुवचनपरमानिये॥
पांच तीन अधीन काया, न्यार शब्द विदेह हैं ॥
देह मांहि विदेह दरशै,गुरुमत निज ए कहौं ॥४५॥
सोरठा-ध्यान विदेह समा, देह धरेका फल यहै ॥
नहिं आवै नहिं जाय,मिलइ देह विदेह होइ ॥४६॥
अस गुरु करे बनाय, बहुरि न जग देही धरै ॥
नहिं आवे नहि जाय, जिहि सतगुरुदाया करे॥४७॥

धर्मदासवचन

हे प्रभु मोहि कृतारथ कीन्हा । पूरण भाग्य दरश मुहि दीन्हा॥
तव गुण मोसन वरणि न जाई। मो अचेत कहँ लीन्ह जगाई ॥
सुधा वचन तुम मोहि प्रियलागे। सुनतहि वचन मोह मद भागे॥
अब वह कथा कहो समुझायी।जिहि विधि जगमें प्रथमैं आयी॥

कबीरसाहबका सत्पुरुषकी आज्ञा पाकर जीवोंको चितानेके लिये चलना,निरंजनसे भेंट होना और उससे बात चीत करके आगे बढना

कबीरवचन

धर्मदास जो पूछ्यो मोही । युग युग कथा कहौं मैं तोही॥
जबही पुरुष आज्ञा कीन्हा ।जीवनकाज पृथ्वी पग दीन्हा॥

करि प्रणाम तबहीं पगु धारा । पहुँचे आय धर्म दरबारा ॥
प्रथमैं चलेउ जीवके काजा । पुरुष प्रताप शीशपर छाजा ॥
तेहियुग नाज अचिन्त कहाये । आज्ञा पुरुष जीव पहँ आये ॥
आवत मिल्यो धर्म अन्याई । तिन पुनि हमसों रार बढ़ाई ॥
मो कहँ देखि धर्म ढिग आवा । महा क्रोध बोले अतुरावा ॥
योगजीत इहवां कस आवो । सो तुम हमसो वचन सुनावो ॥
कै तुम हमको मारन आओ । पुरुष वचन सो मोहि सुनायो ॥

जोगजीत वचन

तासो कह्यो सुनो धर्मराई । जीव काज संसार सिधाई ॥
बहुरि कह्यो सुन सो अन्याई । तुम बहु कीन्ह कपट चतुराई ॥
जीवन कह तुम बहुत भुलावा । बार बार जीवन संतावा ॥
पुरुष भेद तुम गोपित राखा । आपन महिमा परगट भाखा ॥
तप्त शिलापर जीव जरावहु । जारि बारि निजस्वाद करावहु ॥
तुम अस कष्टजीव कह दीन्हा । तबहिपुरुषमोहिआज्ञा कीन्हा ॥
जीव चिताय लोक लै जाऊं । काल कष्टसे जीव बचाऊं ॥
ताते हम संसारहि जायब । दे परवाना लोक पठायब ॥

धर्मराय वचन

यह सुनि काल भयंकर भयऊ । हम कहँ त्रास दिखावन लयऊ ॥
सत्तर युग हम सेवा कीन्ही । राज बड़ाइ पुरुष मुहिं दीन्हीं ॥
फिर चौंसठ युग सेवा ठयऊ । अष्ट खंड पुरुष मुहिं दयऊ ॥
तब तुम मारि निकारे मोही । योगजीत नहिं छांड़ों तोही ॥
अब हम जान भली विधि पावा । मारों तोहि लेउँ अब दावा ॥

जोगजीत वचन

तब हम कहा सुनों धर्मराया । हम तुम्हरे डर नाहिं डराया ॥
हम कहँ तेज पुरुष बल आही । अरे काल तुव डर मोहि नाही ॥

पुरुष प्रताप सुमिरितिहि बारा। शब्द अंगते कालहि सारा ॥
ततछण दृष्टि ताहि पर हेरा। श्याम ललाट भयो तिहि केरा॥
पंख घात जस होय पँखेरू। ऐसे काल मोहि पहँ हेरू ॥
करे क्रोध कछु नाहिं बसाई। तब पुनि परेउ चरण तर आई॥

धर्मरायवचन छन्द

कह निरंजन सुनो ज्ञानी, करो विनती तोहिसों ॥
जान बन्धु विरोध कीन्हों, घाट भयी अब मोहिसों॥
पुरुष सम अब तोहि जानों नहिं दूजी भावना ॥
तुम बड़े सर्वज्ञ साहिब, क्षमा छत्र तनावना ॥ ४५ ॥
सो०—तुमहूँ करो बखशीश, पुरुष दीन्ह जसराजमुहिं॥
षोडशमहँ तुम ईश, ज्ञानी पुरुष एकसम ॥४८॥

ज्ञानी वचन

कह ज्ञानी सुनु राय निरंजन। तुम तो भये वंशमें अञ्जन ॥
जीवन कहँ मैं आनब जाई। सत्य शब्द सत नाम दृढ़ाई॥
पुरुष आज्ञाते हम चलि आये। भौ सागरते जीव मुक्ताये ॥
पुरुष अवाज टारु यहि बारा। छनमहँ तो कहँ देउँ निकारा ॥

धर्मराय वचन

धर्मराय अस बिनती ठानी। मैं सेवक द्वितीया नहिं जानी॥
ज्ञानी विनती एक हमारा। सो न करहु जिहि मोर विगारा॥
पुरुष दीन्ह जस मोंकहँ राजू। तुमहूँ देहु तो होवे काजू ॥
अब हम वचन तुम्हारो मानी। लीजो हंसा हम सो ज्ञानी ॥
विनती एक करों तुहि ताता। दृढ़ कर मानो हमरी बाता ॥
कहा तुम्हारो जीव नहिं मानहिं। हमरी दिशिह्वै बादबखानिहिं॥
दृढ फन्दा हैं रचा बनायी। जामें जीव रहे उरझायी ॥
वेदशास्त्र सुमिरिति गुणनाना। पुत्री तीन देवन परधाना ॥

तिनहू बहु बाजी रचि राखा । हमरी डोरि ज्ञान मुखिभाखा॥
देवल देव पखान पुजाई । तीरथ व्रत जप तप मनलाई॥
पूजा विश्न बलि देव अपराधी । यहि मति जीवन राख्यो बांधी॥
जग्य होम अरु नेम अचारा । और अनेक फन्द मैं डारा॥
जो ज्ञानी जैहो संसारा । जीव न माने कहा तुम्हारा॥

ज्ञानीवचन

ज्ञानी कहे सुनो अन्याई । काटों फन्द जीव लै जाई॥
जेतिक फन्द तुम रचे विचारी। सत्य शब्दते सबै बिडारी॥
जौन जीव हम शब्द दृढ़ावे । फंद तुम्हार सकल मुक्तावे॥
जबजीव चिन्हीं है शब्द हमारा। तजहि भरम सब तोर पसारा॥
सत्य नाम जीवन समझायब । हंस उबार लोक ले जायब॥

छन्द

देहुँ सत्यशब्द दिढ़ायहंसहि, दयाशील क्षमाघनी॥
सहज सील सन्तोषसारा, आत्मपूजा गुन धनी॥
पुरुष सुमिरन सार वीरा, नाम अविचल गाइहौं॥
शीस तुम्हरे पाँव देके, हंसहि लोक पठाइहौं॥४८॥
सो०–अमीनाम विस्तार, हंसहि देह चिताइहौं॥
मरदहिं मात्र तुम्हार, धर्मदास सुनु चित्तदे॥४९॥
चौका करी परवाना पाई । पुरुषनाम तिहि सेउँ चिन्हाई॥
ताके निकट काल नहिं आवे । संधि देख ताकहँ शिर नावे॥
इतना सुनत काल सकाना । हाथ जोरिके विनती ठाना॥
दयावन्त तुम साहिब दाता । एतिक कृपा करो हो ताता॥
पुरुष शाप मोकहँ अस दीन्हा। लच्छजीव नित ग्रासन कीन्हा॥

धर्मरायवचन

जो जिव सकललोक तुव आवे। कैसे क्षुधा सो मोरि बतावे ॥
पुनि पुरुष मोपरदाया कीन्हा। भौसागर कहँ राजमुहि दीन्हा॥
तुमहूँ कृपा मोपर करहूँ। मांगो सो वर मुहि उच्चरहू॥
सतयुग त्रेता द्वापर माहीं। तीनहु युग जीव थोरे जाहीं॥
चौथा युग जब कलियुग आवे। तब तुव शरण जीव बहु जावे॥
ऐसा वचन हार मुहिं दीजे। तब संसार गवन तुम कीजे॥

ज्ञानीवचन

अरे काल परपंच पसारा। तीनों युग जीवन दुख डारा॥
विनती तोरि लीन्ह मैं जानी। मोकहँ ठगा काल अभिमानी॥
जस विनती तू मोसन कीन्ही। सो अबबसि तोहि कहँ दीन्ही॥
चौथायुगजब कलियुग आये। तब हम आपन अंश पठाये॥

छन्द

सुरति आठों अशसुकृत, प्रगटि हैं जग जासके॥
ता पीछे पुनि सुरतनोतन, जाय ग्रह धर्मदासके॥
अंश ब्यालिस पुरुषके वे, जीवकारण आवई॥
कलिपन्थ प्रगट पसारिके,वह जीव लोकपठावई४७
सोरठा–शत्यशब्द दे साथ जिहि परवाना देइहैं॥
सदा ताहि हम साथ, सोजिव यम नहिं पाइ है॥

धर्मराय वचन

हे साहिब तुम पन्थ चलाऊ। जीव उबार लोक लै जाऊ॥
वंश छाप देखौं जेहि हाथा। ताहि हंस हम नाउब माथा॥
पुरुष अवाज लीन्ह मैं मानी। विनती एक करो तुहिं ज्ञानी॥

कालका अपना बाहर पन्थ चलानेकी बात कबीरसाहबसे कहना

पन्थ एक तुम आप चलाऊ। जीवन लै सत लोक पठाऊ॥
द्वादश पन्थ करों मैं साजा। नाम तुम्हार ले करों अवाजा॥

द्वादश यह यम संसार पठैहों। नाम तुम्हारे पंथ चलैहों ॥
मृतु अन्धा इक दूत हमारा। सुकृत ग्रह लै है अवतारा ॥
प्रथम दूत मम प्रगटै जायी। पीछे अंश तुम्हारा आयी ॥
यहि विधि जीवनको भरमाऊँ। पुरुष नाम जीवन समझाऊँ ॥
द्वादश पंथ जीव जो ऐहैं सो। हमरे मुख आन समैं हैं ॥
एतिका बिनती करो बनाई। कीजे कृपा देउ बगसाई ॥

कालका कबीरसाहबसे जगन्नाथ स्थापनाका
वरदान मांगना

कलियुगप्रथमचरणजबआयब। तब हम बौद्ध शरीर बनायब ॥
राजा इन्द्रदवन पहँ जायब। जगन्नाथ हम नाम धरायब॥
राजा मंडप मोर बनैहै। सागर नीर खसावत जैहै ॥
पुत्र हमारा विष्णु तहँ आही। सागर ओइलसात तेहि पाही॥
ताते मण्डप वचन न पाई। उमँगे सागर लेइ डबाई ॥
ज्ञानी एक मता निर्माऊ। प्रथमे सागर तीन सिधाऊ ॥
तुम कहँ सागर लांघि न जाई। देखत उदधि रहे मुरझाई ॥
यहि विधि मोकहँथापिहुजायी। पीछे आपन अंश पठायी ॥
भवसागर तुम पंथ चलाओ। पुरुष नामते जीव बचाओ ॥
सन्धि छाप मोहि देहु बतायी। पुरुष नाम मोहि देहु सुझायी॥
विना सन्धि जो उतरे घाटा। सो हंसा नहिं पावे बाटा ॥

ज्ञानीवचन छन्द

धर्म जस तुम मांगहू सो, चरितहमभल चीन्हिया॥
पंथद्वादश तुम कहेउ सो अमी घोर विष दीन्हिया॥
जो मेटि डारों तोहिको अबपलटिकलादिखावऊँ॥
लैजीवबन्द छुड़ाय यमसों अमरलोक सिधावऊँ ४८

सो०-पुरुषवचनअसनाहिं,यहै साच चित कीन्हेऊ ॥
लै पहुँचावहुँ ताहि, सत्यशब्द जा दृढ गहे ॥ ५१ ॥
द्वादश पन्थ कहेउ अन्याई । सो हम तोहि दीन्ह बगसाई॥
पहिले प्रगटे दूत तुम्हारा । पीछे लेहि अंश औतारा ॥
उदधि तीर कहँ मैं चलि जायब। जगन्नाथको माड मडायब ॥
ता पाछे हम पन्थ चलायब । जीवन कहँ सतलोक पठायब॥

धर्मरायका कबीरसाहबको धोखा देकर उनके गुप्त भेदका पूछना।

धर्मराय वचन

सन्धि छाप मोहि दीजे ज्ञानी। जस दैहौं हंसहि सहिदानी ॥
जो जिन मोकहँ सन्धि बतावे ।ताके निकट काल नहिं आवे॥
नाम निसानी मो कहँ दीजे । हे साहिब यह दाया कीजे ॥

ज्ञानी वचन

जो तेहि देहु सन्धि लखाई । जीवन काज होइहो दुखदाई ॥
तुम परपंच जान हम पावा । काल चलै नहिं तुम्हरो दावा॥
धर्मराय तेहि परगट भाखा । गुप्त अंक बीरा हम राखा ॥
जो कोई लेई नाम हमारा । ताहि छोड़ि तुम होहु नियारा॥
जो तुम हंसहि रोको जायी ।तो तुम काल रहन नहिं पायी॥

धर्मराय वचन

कहे धर्म जाओ संसारा । आनहु जीव नाम आधारा ॥
जो हंसा तुम्हरो गुण गाये ।ताहि निकट तो हम नहिंजाये॥
जो कोई जैहैं शरण तुम्हारा । हम शिर पग दै होवै पारा ॥
हम तो तुमसन कीन्ह ढिठाई। पिता जान कीन्हीं लरिकाई॥
कोटिन औगुण बालक करई । पिता एक हिरदय नहिं धरई॥
जो पितु बालक देह निकारी । तबको रक्षा करे हमारी ॥
धर्मराय उठ सीस नवायो । तब ज्ञानी संसार सिधायो ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

जब हम देखा धर्म सकाना । तब तहवांते कीन्ह पयाना ॥
कह कबीर सुनु धर्मनि नागर । तब मैं चलि आयउँ भवसागर ॥

कबीरसाहबकी ब्रह्मासे भेंट

आया चतुराननके पासा । तासों कीन्ह शब्द परकाशा ॥
ब्रह्मा चित दै सुनवे लीन्हा । पूछचो बहुत पुरुषको चीन्हा ॥
तबहिं निरंजन कीन्ह उपाई । ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा मोर जाई ॥
नीराजन मन घंट विराजै । ब्रह्मा बुद्धि फेरि उपराजै ॥

ब्रह्मावचन

निराकार निर्गुण अविनाशी । ज्योतिस्वरूप शून्यके वासी ॥
ताहि पुरुष कहँ वेद बखाने । आज्ञा वेद ताहि हम जाने ॥

कबीरसाहबका विष्णुके पास पहुंचना

जब देखा तेहि कालदढ़ायो । तहँते उठे विष्णु पहँ आयो ॥
विष्णुहि कह्यो पुरुष उपदेशा । कालवशी नहिं गहे सँदेशा ॥

विष्णुवचन

कहे विष्णु मोसमको आही । चार पदारथ हमरे पाही ॥
काम मोक्ष धर्मारथ साही । चाहे जैन देउँ मैं ताही ॥

ज्ञानी वचन

सुनहु सो विष्णु मोक्षकस तोही । मोक्ष अक्षर परले तर होही ॥
तुम नहिं थिर थिर कस करहू । मिथ्या साखि कवण गुण भरहू ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

रहे सकुच सुन निर्भय बानी । निज हिय विष्णु आपडरमानी ॥
तब पुनि नागलोक चलि गयऊ । तासे कुछकुछ कहिबे लयऊ ॥
पुरुष भेद कोउ जानत नाहीं । लागे सभे कालकी छाहीं ॥
राखनहार कहँ चीन्हों भाई । यहसों को तुहि लेइ छुड़ाई ॥
ब्रह्मा विष्णु रुद्र जिहि ध्यावैं । वेदे जासु गुण निशिदिन गावैं ॥

सोइ पुरुष तेहिं राखनहारा । सोइ तुमहिं लै करिहै गारा ॥
राखनिहार और कोउ आही । करु विश्वास मिलाऊँ ताही ॥
शेष खानि विष तेज सुभाऊ । वचन प्रतीत हृदय नहीं आऊ ॥
सुनहु सुलक्षण धर्मनि नागर । जब मैं आयउँ या भवसागर ॥
आये जब मृत्युमण्डल माहीं । पुरुषजीव कोउ देख्यो नाहीं ॥
काकहँ कहिय पुरुष उपदेशा । सो तो अधिकै यमको भेषा ॥
जो घातक ताको विश्वासा । जो रक्षक तेहि बोल उदासा ॥
जाहि जपै सोई धरि खाई । तब मम शब्द चेत चित आई ॥
जीव मोहवश चीन्हे ताही । तब अस भाव उपज हियमाहीं ॥

छन्द

मेटि डारो काल शाखा, प्रगट काल दिखावऊँ ॥
लेऊँ जीवन छोरि यमसो, अमरलोक पठावऊँ ॥
जाहि कारण रटत डोलों, सो मोकहँ चीन्हई ॥
कालके वश परे जीव सब, तजि सुधाविषलीन्हई ॥
सो०–पुरुषवचनअसनाहिं, यहीसोचचित कीन्हऊ ॥
ले पहुँचायो ताहि, शब्द परख दृढको गहे ॥ ५२ ॥

पुनि जस चरित भयो धर्मदासा । सो सब बरनि कहों तुवपासा ॥
ब्रह्मा विष्णु शंभु सनकादी । सबमिलिकीन्हीशून्यसमाधी ॥
कवन नाम सुमिरो करतारा । कवनहिं नाम ध्यान अनुसारा ॥
सबहिं शून्यमहँ ध्यान लगाये । स्वाति सनेह सीप ज्यों लाये ॥
तबहिं निरंजन जतन विचारा । शून्य गुफाते शब्द उचारा ॥
ररं सु शब्द उठा बहुबारा । मा अक्षर माया संचारा ॥
दोउ अक्षर कहँ समके राखा । रामनाम सबहिन अभिलाषा ॥
रामनाम लै जगहि दृढायो । काल फन्द कोइ चीन्ह न पायो ॥
यह विधि रामनाम उत्पानी । धर्मनि परख लेहु यह बानी ॥

धर्मदास वचन

धर्मदास कहे सतगुरु पूरा। छूटेउ तिमिर ज्ञान तुव सूरा॥
माया मोह घोर अँधियारा। तामहँ जीव परे बिकारा॥
जब तुव ज्ञान प्रगट है माना। छूटे मोह शब्द परखाना॥
धन्य भाग हम तुम कहँ पायी। मोहि अधम कहँ लीन्ह जगायी॥
अब वह कथा कहो समुझायी। सतयुग कौन जीव मुकताई॥

सत्ययुगमें सतसुकृत (कबीरसाहब) के पृथ्वीपर
आनेकी कथा। सद्गुरुवचन

धर्मदास सुनु सतयुग भाऊ। जिन जीवनको नाम सुनाऊ॥
सतयुग सत्तसुकृत मम नाऊँ। आज्ञा पुरुष जीव चेताऊँ॥

धोंधल राजाका वृत्तान्त

नृप धोंधल पहँ मैं चलिजाई। सत्य शब्द सो ताहि सुनाई॥
सत्य शब्द तिन हमरो माना। तिन कह दीन्ह पान परमाना॥

छन्द

राय धोंधल सन्त सज्जन, शब्द मम दृढके गह्यो॥
सारसोत प्रसाद लीन्हो, चरण परसत जल लह्यो॥
प्रेमसे गदगद सब भयो, तजेउ भर्म विभाय हो॥
सारशब्दहिं चीन्ह लीनो, चरण ध्यान लगायहो५०

खेमसरीका वृत्तान्त

सो०–धोंधल शब्द चिताय,तब आयउ मथुरा नगर
खेमसरि आयो धाय,नारि वृद्ध गो बालिसों॥५३॥
कहे खेमसरी पुरुष पुराना। कहवाँते तुम कीन्ह पयाना॥
तासों कहेउ शब्द उपदेशा। पुरुष भाव अरु यमको भेषा॥
सुना खेमसरि उपजा भाऊ। जब चीन्हा सब यमका दाऊ॥

खेमसरीको लोकका दर्शन करना

पै धोखा इक ताहि रहाई । देखे लोक तब मन पतियाई ॥
राखेउ देह हंस लै धावा । पलइक माहिं लोक पहुंचावा ॥
लोक दिखाय हंस लै आयो । देह पाय खेमसरी पछतायो ॥
हे साहेब लै चलु वहि देशा । यहां बहुत है काल कलेशा ॥
तासो कहेउ सुनो यह बानी । जो मैं कहूं लेहु सो मानी ॥

टीका पूरनेपर ही लोककी प्राप्ति होती है

जबलों टीका पूर न भाई । तब लग रहो नाम लौ लाई ॥
तुम तो देखा लोक हमारा । जीवनको उपदेशहु सारा ॥

जीवोंका उपदेश करनेका फल

एकहु जीव शरणागत आवे । सो जीव सत्य पुरुषको भावे ॥
जैसे गऊ बाघ मुख जायी । सो कपिलहि कोइ आय छुड़ायी ॥
ता नरको सब सुयश बखाने । गऊ छुड़ाय बाघते आने ॥
जस कपिला कहँ केहरि त्रासा । ऐसे काल जीव कहँ भ्रासा ॥
एक जीव जो भक्ति दृढावे । कोटिक गऊ पुण्य सो पावे ॥

खेमसरी वचन

खेमसरि परे चरणपर आयी । हे साहिब मोह लेहु बचायी ॥
मोपर दाया करहु प्रकाशा । अब नहिं परौं कालके फांसा ॥

सुकृत वचन

सुन खेमसरि यह यमको देशा । बिना नाम नहिं मिटे अँदेशा ॥
पान प्रवान पुरुषकी डोरी । लेहि जीव यम तिनका तोरी ॥
पुरुष नाम बीरा जो पावे । फिरके भवसागर नहिं आवे ॥

खेमसरी वचन

कहे खेमसरि परवाना दीजे । यमसों छोरि अपन करि लीजे ॥
और जीव हमरे गृह आही । नाम पान प्रभु दीजे ताही ॥
मोरे गृह अब धारिय पाऊ । मुक्तिसन्देश जीवन समझाऊ ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

भयेउँ तासु ग्रह भाव समागम। परेउ चरणतर नारि सुधासम॥
खेमसरी सब कहि समझायी। जन्म सुफल करुरे सब भायी॥

खेमसरीवचन परिवारप्रति

जीवन मुक्ति चाहु जो भाई। सतगुरु शब्द कहो सो आई॥
यमसो येहि छुड़ावन हारे। निश्चय मानो कहा हमारे॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

सब जीवन परतीत दृढ़ावा। खेमसरी संग सबजिव आवा॥

सब मिलकर विनय करते हैं

आय गये सब चरण हमारा। साहिब मोर करो निस्तारा॥
जाते यम नहिं मोहि सताये। जन्म जन्म दुख दुसह नसाये॥

कबीरवचन धर्मदास प्रति

अति अधीन देखेउ नर नारी। तासों हम अस वचन उचारी॥
जो कोई मनिहै शब्द हमारा। ताकहँ कोई न रोकनहारा॥
जो जिय माने मम उपदेशा। मेटो ताकर काल कलेशा॥
पुरुष नाम परवाना पावे। यमराजा तिहि निकट न जावे॥

सुकृतवचन खेमसरी प्रति

आनहु साज आरती केरा। काल कष्ट मेटों जिय केरा॥

खेमसरी वचन

कह खेमसरी प्रभु कहो विलोई। कवन वस्तु लै आरति होई॥

सुकृतवचन खेमसरी प्रतिछन्द

भाव आरती खेमसरि सुनु, तोहि कहुँ समुझायके॥
मिष्ठान पान कर्पूर केरा, अष्ट मेवा लायके॥
पांच बसन श्वेत वस्तर, कदलिपत्र अच्छन्दना॥
नारियल अरु पुहुप श्वेतहि, श्वेत चौकाचंदना॥५१॥

सो०-यह आरति अनुमानि, आनुखेमसरिसाजसब॥
पुंगीफल परमान, शब्द अंग चौका करे ॥५॥
और वस्तु आनहु सुठिपावन। गो घृत उत्तम श्वेत सुहावन॥

कबीरवचन धर्मप्रति

खेमसरि सुनि सिखावन माना। ततक्षण सब विस्तार सो आना॥
सेत चंदोवा दीन्हों तानी। आरति करनयुक्तिविधि ठानी॥
पंच साधु इच्छा उपराजा। भक्ति भजन गुरुज्ञानविराजा॥
हम चौकापर बैठक लयऊ। भजन अखंड शब्दधुन भयऊ॥
भजन अखंड शब्दध्वनि होई। दुनियां चांप सके नहिं कोई॥
सत्य समय लै चौका साजा। ज्योतिप्रकाशअखंडविराजा॥
शब्द अंग चौका अनुमाना। मोरत नरियल काल पराना॥
जब भयोनरियर शिलासंयोगा। काल शीश पुनि चम्पै रोगा॥
नरियल मोरत बास उड़ायी। सत्य पुरुष कह जानि-जनायी॥
पांच शब्द कहि तब दल फेरा। पुरुष नाम लीन्हो तिहि बेरा॥
छन एक बैठे पुरुष तहँ भाई। सकल सभा उठि आरति लाई॥
तब पुनि आरति दीन्ह मँडाई। तिनका तोरे जल अँचवाई॥
प्रथम खेमसरि लीन्हों पाना। पाछे और जीव संमाना॥
दीन्हेउ ध्यान अग समुझाई। ध्यान नामते हंस बचाई॥
रहनि गहनि सब दीन्ह दृढ़ाई। सुमिरत नाम हंस घर जाई॥

छन्द

हंस द्वादश बोधि सतगुरु, गयउ सुखसागर करी॥
सतपुरुष चरण सरोज परसेउ, विहसिके अंकमभरी॥

---

१ किसी किसी प्रतिमें द्वादशके स्थानमें त्रयोदश लिखा है। और किसी किसीमें द्वादश त्रयोदश कुछभी न लिखकर "दिनदश बांधि" लिखा है

बूझिकुशल प्रसन्न बहुविधि मूल जीवनके धनी ॥
बंधुहर्षितसकलशोभा, मिली अति सुन्दर बनी ॥५२॥
सो०–शोभावरणि न जाय, धर्मनिहंसनकान्तिकर ॥
रविषोडश शशिकाय, एक हंस उजियारजौं ॥५५॥
कछु दिन कीन्हो लोक निवासा। देखेउ आय बहुरि निजदासा ॥
निशिदिन रहों गुप्त जगमाहीं। मोकहँ कोइ जिव चीन्हत नाहीं॥
जो जीवन परबोध्यो जायी। तिनकहँ दीन्हो लोक पठायी ॥
सत्य लोक हंसन सुखबासा। सदा बसंत पुरुषके पासा ॥
सो देखे जो पहुँचे जाई। जिन यहि रचा सोकहा चिताई॥

त्रेता युगमें मुनींद्र (कबीरसाहब) के पृथ्वीपर आनेकी कथा

सतयुग गयो त्रेतायुग आवा। नाम मुनींद्र जीव समुझावा ॥
जब आयेउ जीवन उपदेशा। धर्मराय हितभये अँदेशा ॥
इन भवसागर मोर उजारा। जिव लै जाहि पुरुष दरबारा॥
कैतो छल बल करे उपाई। ज्ञानिडर तिहि नाहिं ठराई ॥
पुरुष प्रताप ज्ञानिके पासा। ताते मोइ न लागे फांसा ॥
इनते काल कछु पावै नाहीं। नाम प्रताप हंस घरजाहीं ॥

छन्द

सत्यनाम प्रताप धर्मनि, हंसाघर निज कै चलै ॥
जीमिदेख केहरित्रास गज, हिय कंपकरधरनीरलै ॥
पुरुष नाम प्रताप केहरि, काल गज सम जानिये ॥
नाम गहि सतलोक पहुँचे, गिराममफुरमानिये॥५३॥
सो०–सतगुरुशब्द समाय,गुरु आज्ञा निरखन चले ॥
रहै नाम लौलाय कर्म भर्म मन मति तजै ॥५६॥

त्रेता युग जबही पगु धारा । मृत्युलोक कीन्हों पैसारा ॥
जीव अनेकन पूछा जाई । यमसे को तुहिं लेहिं छुड़ाई ॥
कहे भर्म वश जीव अयाना । हमरा करता पुरुष पुराना ॥
विष्णु सदा हमरे रखवारा । यमते मोहिं छुड़ावन हारा ॥
कोइ महेशकी आश लगावें । कोइ चण्डी देवी गावें ॥
कहा कहों जिव भयो विगाना । तजेउ खसमकहँजारबिकाना ॥
कर्म कोठरी सब दिन डारा । फंदा दे सत जीवन मारा ॥
सत्य पुरुषकी आयसु पाऊँ । कालहि मेटि छोर जिवलाऊँ ॥
जोर करों तो वचन नसाई । सहजहिं जीवन लेउँ चिताई ॥
जो ग्रासे जिव सेवै ताहीं । अनचीन्हे यमके मुख जाहीं ॥

विचित्र भाटकी कथा लंकामें

चहुँ दिश फिरि अयेउँ गढ़लंका । भाट विचित्र मिल्योनिःशंका ॥
तिनि पुनि पूछेउ मुक्ति संदेशा । तासों कह्यो ज्ञान उपदेशा ॥
सुनि विचित्र तबहि भ्रम भागा । अति अधीनह्वै चरणन लागा ॥
कहे शरण मुहि दीजें स्वामी । तुम सब पुरुषससुखधामी ॥
कीजै मोहि कृतारथ आजू । मोरे जिवकर कीजे काजू ॥
कह्यो ताहि आरति को लेखा । खेमसरिहि जस भाषेउ रेखा ॥
आनेहु भाव सहित सब साजा । आरति कीन्हशब्दधुनिगाजा ॥
तृण तोरा वीरा तिहि दीन्हा । ताके गृहमें काहु न चीन्हा ॥
सुमिरण ध्यान ताहिसों भाखा । पूरण डोरि गोय नहिं राखा ॥

छन्द

विचित्र वनिता गयी नृप ढिग,जाय रानीसो कही ॥
इकयोगी सुन्दर है महामुनि,तासुमहिमा काकही ॥
श्वेतकला अपार उत्तम, और नहिं अस देखेउ ॥
पतिहमारेशरणगहितिहि, जन्मशुभ करिलेखेऊं ५४

मन्दोदरीका वृत्तान्त

सो०-सुनत मँदोदरि चाव, दरशलेन अकुलानेऊ ॥
वृषली संगले आव, कनक रतनले पगु धरयो॥५७॥

चरण टेकिके नायो शीशा। तब मुनीन्द्र पुनि दीन्ह अशीशा॥

मन्दोदरी वचन

कहे मँदोदरि शुभ दिन मोरी। विनती करों दोउ कर जोरी॥
ऐसा तपसी कबहु न देखा। श्वेत अंग सब श्वेतहि भेखा॥
जिवकारज मम हो जिहि भांती। सो मोहि कहो तजो कुलजाती॥
हे समरथ मोहि करहु सनाथा। भव बूड़त गहि राखो हाथा॥
अब प्रतिप्रिय मोहि तुम लागे। तुम दयाल सकल भ्रम भागे॥

मुनींद्रवचन मन्दोदरीप्रति

सुनहु वधू प्रिय रावण केरी। नाम प्रताप कटे यम बेरी॥
ज्ञान दृष्टिसों परखहु भाई। खरा खोट तोहि देऊँ चिन्हाई॥
पुरुष अमान अजरमनिसारा। सो तो तीन लोकते न्यारा॥
तेहि साहिब कहँ सुमिरे कोई। आवागमन रहित सो होई॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

सुनतहि शब्द तासु भ्रम भागा। गह्यो शब्द शुचिमन अनुरागा॥
हे साहिब मोहि लीजे शरणा। मेटहु मोर जन्म अरु मरणा॥
दीन्हों ताहि पान परवाना। पुरुष डोर सौंप्यों सहिदाना॥
गदगद भई पाय घर डोरी। मिलिरंकहि जिमि द्रव्यकरोरी॥
रानी टेकेउ चरण हमारा। ता पाछे महलन पगु धारा॥

विचित्र वधूका वृत्तान्त

विचित्र वधूरानी समुझावा। गही शरण जीवन मुक्तावा॥
विचित्रनारिगहिशनिसिखापन।लीन्हेसिपानतजाभ्रमआपन॥

मुनींद्रका रावणके पास जाना

तब मैं रावणपहँ चलि आयो। द्वारपालसों वचन सुनायो॥

मुनींद्रवचन द्वारपालप्रति

तासों एक बात समुझाई । राजा कहँ तुम आव लिवाई ॥

द्वारपाल वचन

तब पौरिया विनय यह लाई । महा प्रचंड है रावण राई ॥
शिवबल हृदय शंकर नहिं आने । काहूकेर वचन नहिं माने ॥
महागर्व अरु क्रोध अपारा । कहों जाय मोहि पलमें मारा ॥

मुनींद्रवचन द्वारपालप्रति

मानहु वचन जाव यहि बारा । रोम बंक नहिं होय तुम्हारा ॥
सत्य वचन तुम हमरो मानो । रावण जाय तुरत तुम आनो ॥

प्रतिहारवचन

ततक्षण गा प्रतिहार जनायी । द्वै कर जोरे ठाढ़ रहाई ॥
सिद्ध एक तो हम पहँ आयी । ते कह राजहि लाव बलाई ॥

रावणका क्रोध प्रतिहारप्रति

सुनु नृप क्रोध कीन्ह तेहि बारा । तै मतिहीन आहि प्रतिहारा ॥
यह मति ज्ञान हरों किन तोरा । जो तैं मोहि बुलावन दौरा ॥
दर्श मोर शिवसुत नहिं पावत । मोकहँ भिक्षुक कहा बुलावत ॥
हे प्रतिहार सुनहु मम बानी । सिद्धरूप कहो मोहि बखानी ॥
वर्णन है कौन कौन तेहि भेषा । मो सन दृष्टि जस येहि देखा ॥

प्रतिहारवचन

अहो रावण तेहि श्वेतरूपा । श्वेतहि माला तिलक अनूपा ॥
शशि समान है रूप विराजा । श्वेत वसन सब श्वेतहि साजा ॥

मन्दोदरीवचन

कहे मँदोदरी रावण राजा । ऐसो रूप पुरुषको छाजा ॥
वेगे जाय गहो तुम पाई । तो तुव राज अटल होय जाई ॥
छोड़हु राजा मान बड़ाई । चरण टेकि जो शीश नवाई ॥

कबीरवचन धर्मदास प्रति

रावण सुनत क्रोध अतिकीन्हा। जरत हुताशन मनुघृत दीन्हा॥
रावण चला शस्त्र लै हाथा। तुरत जाय तिहि काटों माथा॥
मारों ताहि सीस खसि परई। देखों भिक्षुक मोर का करई॥
जहँ मुनींद्र तहँ रावण राई। सत्तर बार अस्त्र कर लाई॥
लीन्ह मुनींद्र तृण कर ओटा। अति बल रावण मारै चोटा॥

छन्द

तृण ओट यहि कारणे, गर्व धरी राय हो॥
तेहि कारणे यह युक्ति कीन्ही, लाज रावण आयहो॥

मन्दोदरी वचन

कहे मन्दोदरि सुनहु राजा, गर्व छोड़ो लाज हो॥
पांव टेकहु पुरुषके गहि, अटल होवै राज हो॥५५॥

रावण वचन

सो०-सेवाकरोंशिवजाय, जिनमोहिराज अटल दियो
ताकरटेकों पांय पल, दंडवत क्षणिताहिको॥ ५८॥

मुनीद्रवचन

सुन अस वचन मुनींद्र पुकारी। तुम हो रावण गर्व अहारी॥
भेद हमारा तुम नहिं जाना। वचनएक तोहिकहों निशाना॥
रामचंद्र मारें तुहि आयी। मांस तुम्हार श्वान नहिं खायी॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

रावणको कीन्हो अपमाना। अवधनगर पुनि कीन्ह पयाना॥

मधुकरकी कथा छन्द

रावणको अपमान करी, तब अवधनगरहि आयऊ॥
विप्र मधुकर मिलेउ मारग, दरशतिनमन पायऊ॥

---

१ इसके बदले पुराने ग्रन्थोंमें ऐसा लिखा है–
"तीन जीव परमोधि लंका, तब अवध नगरहि आयऊ"

मिलेउ मोकहँ चरणगहि, तबशीसनायअधीनता ॥
करिविनयबहुलेगयोमंदिर,कीन्हबहुविधिदीनता ५६
सो०-रंकविप्र थिर ज्ञान, बहुत प्रेममोंसो किया ॥
शब्द ज्ञान सहिदान,सुधासरितविहँसतवदन॥५९॥

देख्यो ताहि बहुत लवलीन्हा । तासों कह्यो ज्ञानको चीन्हा ॥
पुरुष सँदेश कहेउ तिहि पासा।सुनतवचन जिय भयउ हुलासा॥
जिमि अंकुर तपै बिन वारी । पूर्ण उदक जो मिले खरारी॥
अम्बुमिलत अंकुर सुख माना ।जैसेहि मधुकर शब्दहि जाना॥

मधुकरवचन

पुरुष भाव सुनतेहि हरषंता । मोकहं लोक दिखावहु संता॥

मुनींद्रवचन

चलहु तोहि लै लोक दिखावों।लोकदिखाय बहुरिले आवों ॥

कबीरवचन धर्मदास प्रति

राख्यो देह हंस ले धाये । अमर लोकलै तिहि पहुँचाये॥
शोभा लोक देख हरषाना । तव मधुकरको मन पतियाना॥

मधुकर वचन

पर्‍यो चरण मधुकर अकुलाई। हे साहिब अब तृषा बुझाई ॥
अब मोहिं लेइ चलो जगमाहीं। और जीव उपदेशो ताहीं ॥
और जीव गृहमाहिं जो आई। तिनकहँ हम उपदेशब जाई ॥

कबीर वचन धर्मदासप्रति

हंसहि लै आये संसारा । पैठि देहि जाग्यो द्विजवारा ॥
मधुकर घर षोडशजिव रहई । पुरुष संदेश सबनसों कहई ॥
गहहु चरण समरथके जाई । यही लेहिं जमसों मुक्ताई ॥
मधुकर वचन सबन मिलि माना।मुक्ति जान लीन्हो परवाना॥

मधुकरवचन

कह मधुकर विनती सुन लीजै। लोकनिवास सबनकहँ दीजै ॥
यह यम देश बहुत दुख होई। जीव अम्बु बूझै नहिं कोई ॥
मोहि सब जीवनलै सुस्वामी। कृपा करहु प्रभु अन्तर्यामी ॥
छंद-यहि देश है यममहापरबल, जीवसकलसतावई॥
कष्ट नाना भाँति व्यापे, मरण जीवन लावई ॥
काम क्रोध कठोर तृष्णा, लोभ माया अतिबली॥
देवमुनिगण सबहि व्यापे, कोट जीवन दलमली ५७
सो०-तिहु पुरयमको देश, जीवन कहसुखछनकहिं॥
मेटहु काल कलेश, लेइ चलहु निज देशकहँ॥६०॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

बहुत अधीन ताहि हम जाना। करचौका तब दीन्ह परवाना॥
षोडश जिव परवाना पाये। तिन कहँलै सतलोक पठाये ॥
यमके दूत देख सब ठाढ़े। चितवहिं तेजन ऊर्द्ध अखाड़े॥
पहुँच जाय पुरुष दरबारा। अंशन हंसन हर्ष अपारा ॥
परसे चरण पुरुषके हंसा। जन्म मरणको मेटेउ संसा ॥
सकल हंस पूछी कुशलाई। कहुद्विज कुशल भये अब आई॥
धर्मदास यह अचरज बानी। गुप्त प्रगट चीन्हे सोई ज्ञानी॥
हंसनं अगर चीर पहिराये। देह हिरम्मर लखि सुखपाये॥
षोडश भानु हंस उजियारा। अमृत भोजन करे अहारा ॥
अगर वासना तृप्त शरीरा। पुरुष दरश गदगद मतिधीरा॥
यहि विधि त्रेतायुगको भावा। हंस मुक्त भये नाम प्रभावा ॥

द्वापरयुगमें करुणामय (कबीर साहब) के पृथ्वीपर आनेकी कथा

त्रेता गत द्वापर युग आवा। तब पुनि भयो कालपरभावा॥
द्वापर युग प्रवेश भा जबही। पुरुष अवाज कीन्ह पुनि तबही॥

पुरुषवचन

ज्ञानी वेगि जाहु संसारा । यमसों जीवन करहु उबारा ॥
काल देत जीवन कहँ त्रासा । काटो जाय तिनहिको फांसा ॥
कालहि मेटि जीव लै आवो । बार बारका जगहि सिधावो ॥

ज्ञानीवचन

तब हम कहा पुरुषसों बानी । आज्ञा करहु शब्द परवानी ॥

पुरुषवचन

कहा पुरुष सुनु योग संतायन । शब्द चिताय जीव मुक्तायन ॥
जो अब काल कीन्ह अन्याई । हो सुत तुम मम वचन नसाई ॥
अब तो परे जीव यह फन्दा । जुगुतहि आनु परम आनंदा ॥
काल चरित परगट ह्वै जाई । तब सब जीव चरण गहें आई ॥
ज्ञान अज्ञान चीन्ह नहिं जाई । देखहु भाव जिवनको भाई ॥
सहज भाव जग प्रगटहु जाई । जाय प्रगट ह्वै जिवन चिताई ॥
तोहि गहे सो जिव मुहि पैहै । तनु प्रतीत बिरले मय खैहै ॥
जाई करहु जीव कडिहारी । तो पर है परताप हमारी ॥
हमसो तुमहिं अन्तर नाहीं । जिमि तरंग जलमाहि समाहीं ॥
हमहिं तुमहिं जो दुइकर जाना । ता घट यम सब करिहै थाना ॥
जाहु बेगि वा तुम संसारा । जीवन खेइ उतारहु पारा ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

चले ज्ञानी तब माथ नवायी । पुरुष आज्ञा जगमाहि सिधाई ॥
पुरुष अवाज चल्यो संसारा । चरण टेकु मम धर्म लवारा ॥

निरंजनवचन छन्द

तुहे धर्मराय अधीन ह्वै बहु भाँति विनती कीन्हेऊ
किहि कारणे अब जगसिधारेहु, माहि सोमति दीन्हेऊ
अस करहु जनि सब जग चितावहु इहै विनती मैं करौं
तुमबंधु जेठे छोट मैं कर जोर तुम पायन परौं ५८

ज्ञानीवचन

सो०—कह्योधर्मसुन बात,विरल जीवमोहि चीन्हिहैं॥
शब्दनको पतियात,तुम अस कै जीवन ठगे ॥६१॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

अस कह मृत्युलोक पगु धारा। पुनि परमारथ शब्द पुकारा॥
छोड़्यो लोक लोककी काया। नरकी देह धारि तब आया ॥
मृत्युलोकमें हम पगु धारा। जीवनसो सत शब्द पुकारा ॥
करुणामय तब नाम धराया। द्वापर युग जब महिमें आया॥
कोई न बूझे हैला मेरी। बांधे काल विषमभ्रम बेरी ॥

रानी इन्द्रमतीकी कथा

गढ़गिरिनारतबहि चलि आये। चंद्रविजय नृप तहां रहाये ॥
तेहि नृप गृहरह नारि सयानी। पूजै साधु महातम जानी ॥
चढ़ी अटारी वाट निहारे। संत दरश कहँ कायागारे ॥
रानी प्रीति बहुत हम जाना। तेहि मारग कहँ कीन्ह पयाना॥
मोहि पहँ दृष्टि परी जब रानी। वृषली रसना कह यह बानी ॥

इन्द्रमती वचन

मारग बेगि जाहु तुम धाई। देखहु साधु आनु गहि पाई॥

दासीवचन

वृषली आय चरण लपटानी। नृपवनिता मुख भास सयानी॥
कही वृषली रानि अस भाषा। तुम दर्शन कहँ अभिलाषा ॥
देहु दरश मोहिं दीनदयाला। तुम्हरे दरश मिटे सब शाला॥

करुणामय वचन दासीप्रति

तब ज्ञानी कहि वचन सुनावें। राज रावघर हम नहिं जावें॥
राज काज है मान बड़ाई। हम साधू नृप गृह नहिं जाई॥

---

१ दासी लौंड़ी

दासीवचन रानीप्रति

चली वृषली रानी पहँ आयी । द्वै कर जोरे विनय सुनायी ॥
साधु न आवे मोर बुलाई । राज राव घर हम नहिं जाई॥
यह सुन इन्द्रमती उठि धाई । कीन्ह दंडवत टेके पाई ॥

इन्द्रमती वचन

हे साहिब मोपर करु दाया । मोरे गृह अब धरिये पाया ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

प्रीति देख हम भवन सिधारे । राजा घर तबहीं पग धारे ॥
कहे रानी चलु मन्दिर मोरे । भयो सुखी दर्शन लिये तोरे॥
प्रीति देखितहि भवन सिधारे । दीन्ह सिंहासन चरण खटाये॥
दीन्ह सिंहासन चरण पखारी । चरणपरछालन अंगोछाधारी॥
चरण धोय पुनि राखे सिरानी। पटपद पोंछ जन्मशुभ जानी॥

इन्द्रमती वचन

पुनि प्रसादको आज्ञा मांगी । हे प्रभु मोकहँ करहु सुभागी॥
जूठन परै मोरे गृहमाहीं । सीताप्रसाद लै हमहूँ खाहीं ॥

करुणामयवचन

सुनु रानी मोहि क्षुधा न कोई । पंचतत्व पावे जेहि सोई ॥
अमृत नाम अहार है मोरा । सुनु रानी यह भाष्यो थोरा ॥
देह हमारि तत्व गुण न्यारी । तत्वप्रकृतिहि कालरचिवारी॥
असी पंच किहु कालसमीरा । पंच तत्वकी देह खमीरा ॥
ताहम आदि पवन इक आहीं। जीव सोहंग बोलियो ताही ॥
यह जिव अहै पुरुषको अंशा । रोकसि काल ताहि दे संशा ॥
नाना फन्द रचि जीव गरासै । देह लोभ तब जीवहि फांसै॥
जिवतारन हम यहि जग आये । जो जिव चीन्हे ताहि मुक्ताये॥
धर्मराय अस बाजी कीन्हा । धोक अनेक जीव कहँ दीन्हा॥
नीर पवनकृत्रिम किहु काला । विनशिजाय बहुकरै बिहाला॥

तन हमार यदि साजते न्यारा। मम तन नहिं सिरज्यो करतारा॥
शब्द अमान देह है मोरा। परखि गहहु भाष्यो कछु थोरा॥

कबीरवचन धर्मदास प्रति

सुनी वचन अचल भौ भारी। तब रानी अस वचन उचारी॥

रानी इन्द्रमती वचन

हे प्रभु अचरज यह होई। अस सुभाव दूजा नहिं कोई॥

छन्द

इन्द्रमती आधीन ह्वै कहै, कृपा करहु दयानिधी॥
एक एक विलोय वरणहु, मोहिते सकलहु विधी॥
विष्णु सम दूजा नहिं कोई रुद्र चतुरानन मुनि॥
पंचत्त्व खमीर तनहि, तत्त्वके वश गणगुणी॥५९॥
सो०—तुम प्रभु गम अपार, बरनो मोते कितभये॥
भेटहु तृषा हमार अपनो, परिचय मोहि कह॥६२॥
हे प्रभु अस अचरज मोहि होई। अस सुभाव दूजा नहिं कोई॥
कौन आहु कहवाँते आये। तन अचिंत प्रभु कहँवा पाये॥
कौन नाम तुम्हरो गुरु देवा। यह सब बरणि कहो मोहि भेवा॥
हम का जानहि भेद तुम्हारा। ताते पूछों यह व्यवहारा॥

करुणामय वचन

इन्द्रमती सुनो कथा सुहावन। तोहि समुझाय कहों गुणपावन॥
देश हमार न्यार तिहुँ पुरते। अहिपुर नरपुर अरु सुरपुरते॥
तहां नहीं यमकेर प्रवेशा। आदि पुरुषको जहवां देशा॥
सत्य लोक तेहि देश सुहेला। सत्य नाम गहि कीजे मेला॥
अद्भुत ज्योति पुरुषकी काया। हंसन शोभा अधिक सुहाया॥
आदि पुरुष शोभा अधिकारा। पटतर काहि देहुँ संसारा॥
द्वीपकरी शोभा उजियारी। पटतर देहुँ काहि संसारी॥

यहि तीनों पुर अस नहिं कोई । जाकर तटपर दीजै सोई ॥
चन्द्र सूर यहि देश मंझारा । इन सम और नहीं उजियारा ॥
सत्य लोककी ऐसी बाता । कोटिक शशि इक रोम लजाता ॥
एक रोमकी शोभा ऐसी । और वदनकी वरणों कैसी ॥
ऐसा पुरुष कान्ति उजियारा । हंसन शोभा कहों बिचारा ॥
एक हंस जस षोडश भाना । अग्र वासना हंस अधाना ॥
तहँ कबहूँ यामिनि नहिं होई । सदा अजोर पुरुष तन सोई ॥
कहा कहों कछु कहत न आवै । धन्य भाग जे हंस सिधावै ॥
ताहि देशते हम चलि आये । करुणामय निज नाम धराये ॥
सतयुग त्रेता द्वापर नामा । तोसन वचन कहों सुख धामा ॥
युगन युगनमें मैं चलि आवों । जो चेते तेहि लोक पठावों ॥

इन्द्रमती वचन

हे प्रभु औरौ युग तुम आये । कौन नाम उन युगन धराये ॥

करुणामय वचन

सतयुगमें सतनाम कहाये । त्रेता नाम मुनींद्र धराये ॥
युगन युगन हम नाम धरावा । जो चीन्हा तेहि लोक पठावा ॥

कबीरवचन धर्मदास प्रति

धर्मदास तेहि कह्यो बुझाई । सतयुग त्रेता कथा सुनाई ॥
सो सुनि अधिक चाह तिन कीन्हा । और बातसू पूछन लीन्हा ॥
उत्पति प्रलय और बहु भाऊ । यम चरित्र सब बरनि सुनाऊ ॥
जेहि विधि षोडश सुत प्रगटाना । सो सब भाषा सुनायो ज्ञाना ॥
कूर्म विदार देवी उत्पानी । सो सब ताहि कहा सहिदानी ॥
ग्रास अष्टंगी और निकासा । जेहि विधि भये मही आकासा ॥
सिंधुमथन त्रय सुत उत्पानी । सबहि कहेउ पाछिल सहिदानी ॥

जेहिविधिजीवनजमठगिराखा। सो सब ताहि सुनायउ भाषा ॥
सुनत ज्ञान पाछिल भ्रम भागा। हरषि सो चरण गहे अनुरागा॥

इन्द्रमती वचन

जोरि पाणि बोली बिलखायी। प्रभु यमते लेहु छुड़ाई ॥
राज पाट सब तुम पर बारों।धन सम्पति यह सब तजि डारों॥
देहु शरण मुहिं दीनदयाला। बंदिछोर मुहिं करहु निहाला॥

करुणामय वचन

इन्द्रमती सुन वचन हमारा। छोरों निश्चय बंदि तुम्हारा ॥
चीन्हेउ मोहिं परतीत दृढाना। अब देहुँ तोहि नाम परवाना॥
करहु आरती लेहु परवाना। भागे यम तब दूर पयाना ॥
चीन्हों मोहि करो परवाती।लेहु पान चालु भौ जल जाती॥
आनहु जो कछु आरती साजा। राजपाट कर मोहि न काजा॥
धन सम्पति कछु मोहि न भावा।जीव चितावन यहि जग आवा॥
धन सम्पति तुम यहवाँ लायी। करहु सन्त सम्मान बनायी ॥
सकल जीव हैं साहिब केरा। मोह वश जिय परें अँधेरा ॥
सब घट पुरुष अंश कियो बासा।यही प्रगट कहिं गुप्त निवासा ॥

छन्द

सब जीव है सतपुरुषका वश,मोह भ्रम विगानहो॥
यमराजको यह चरित सब, भ्रमजाल जग परधानहो॥
जिव कालवश लरत मोसे भ्रमवश मोहि चीन्हई ॥
तजिसुधाकीन्होनेहविषसे,छोड़िघृत अँचवे महीं६०॥
सो०-कोइइकविरला जीव,परखि शब्द मोहि चीन्हई॥
धाय मिले निज पीव, तजे जारको आसरो ॥६३॥

इन्द्रमती वचन

इन्द्रमती सुन वचन अमानी। बोली मधुर ज्ञान गुण बानी॥

मोहि अधमको तुम सुख दीन्हा। तुव प्रसाद आगमगम चीन्हा॥
हे प्रभु चीन्ह तोहि अब पाहू। निश्चय सत्यपुरुष तुम आहू॥
सत्यपुरुष जिन लोक सवारा। करेहु कृपा सो मोहि उदारा॥
आपन हिरदै असहम जाना। तुमते अधिक और नहिं आना॥
अब भाषहु प्रभु आरती भाऊ। जो चाहिये सो मोहि बताऊ॥

कबीरवचन धर्मदास प्रति

हे धर्मनि सो ताहि सुनावा। जस खेमसरि सो भाषेउ भावा॥
चौका कर लेवहु परवाना। पीछे कहों अपन सहिदाना॥
आने उसकलसाज तब रानी। चौका बैठि शब्दध्वनि ठानी॥
आरति कर दीन्हा परवाना। पुरुष ध्यान सुमिरण सहिदाना॥
उठि रानी तब माथ नवायी। ले आज्ञा परवानी पायी॥
पुनि रानी राजहि समुझावा। हे प्रभु बहुरि न ऐसो दावा॥
गहो शरण जो कारज चाहो। इतना वचन मोर निरवाहो॥

राजा चन्द्र विजय वचन

तुम रानी अरधंगी सोई। हम तुम भक्त होय नहिं होई॥
तोरि भक्ति कर देखो भाऊ। किहिविधि मोहि लेहु मुक्ताऊ॥
देखो तोरि भक्ति परतापा। पहुँचै लोक मिटै संतापा॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

रानी बहुरि मोहिपहँ आयी। हम तिहिकाल चरित्र लखाई॥
रानी आई हमरें पासा। तासों कियो वचन परकासा॥

करुणामय वचन

सुनु रानी एक वचन हमारा। कालहु कला करे छल धारा॥
काल व्याल है तोपहँ आयी। डसे तोहि सो देउँ बतायी॥
ता कहँ शिष्य कीन्ह मैं जानी। डसे काल तक्षक है आनी॥
तब हम तो कहँ मंत्र लखायी। काल गरल तब दूर परायी॥

दीन्हों शब्द विरहुली ताहीं । काल गरल जेहि व्यापे नाहीं॥
पुनि यम दूसर छल तोहि ठानी। सो चरित्र मैं कहों बखानी ॥
छलकर यम आये तुम पासा । सो तुहि भेद कहों परगासा ॥
हंसवर्ण वह रूप बनायी । हमसम ज्ञान तोहि समझायी॥
तुमसन कहे चीन्ह मोहिरानी । मरदन काल नाम ममज्ञानी॥
यहि विधि कालठगे तोहि आयी।काल रेख सब देउ बतायी ॥
मस्तक छोट कालकर जानू । चक्षु गुंपनको रंग बखानू ॥
काल लक्ष मैं तोहि बतायी । और अंग सब सेत रहायी॥

इन्द्रमती वचन

रानी चरण गहे तब धायी । हे प्रभु मोहि लोक लै जायी॥
यह तो देश आही यमकेरा । लै चलु लोक मिटै झकझोरा॥
यह तो देश कालकर थानी । हे प्रभु लै चलु देश अमानी॥

करुणामय वचन

तब रानीसों कहेउ बुझाई । वचन हमार सुनो चितलाई॥
अब तोर तिनका यमसों टूटा । परिचय भयो सकलभ्रम छूटा॥
निशिदिन सुमरो नाम हमारा। कहा करे यह धर्म लबारा ॥
जब लगि ठेका पूरे नाई । तब लगि रहो नाम लौ लाई॥

छन्द

सुमरु नामहमार निशिदिन,कालतो कहँ जब छले॥
टीका पुरे नाहि जोलों तोलों जीव नाहीं चले ॥
काल कला प्रचंड देखो, गजरूप धर जग आवई॥
देखि केहरि गजत्रास माने,धीर बहुरि न लावई॥६१॥
सो०-गजरूपी है काल, केहरि पुरुष प्रताप है ॥
रोप रहो तुम ढाल,काल खड्ग व्यापे नाहीं॥६४॥

इन्द्रमती वचन

हे साहिब मैं तुम कहँ जानी। वचन तुम्हार लीन्ह सिर मानी॥
विनती एक करों तुहि स्वामी। तुम तो साहिब अंतरयामी॥
काल व्याल हुए मोहिं सताई। अरु पुनि हंसरूप भरमायी॥
तब पुनि साहिब मोपहँ आऊ। हंस हमार लोको लै जाऊ॥

करुणामय वचन

कह ज्ञानी सुन रानी बाता। तुमसों एक कहों विख्याता॥
काल कला धरती पहँ आयी। नाना रंग चरित्र बनायी॥
तोरो ताहि मान अपमाना। मोहि देखि तब काल पराना॥
तोहि पीछे हम तुम लग आवैं। हंस हमार लोक पहुँचावैं॥
शब्द तोहि हम दीन्ह लखाई। निशिदिन सुपरी चित्त लगायी॥

कबीर वचन धर्मदासप्रति

इतना कह हम गुप्त छिपाया। तक्षक रूप काल हो आया॥
चित्रसार पर तक्षक आया। रानी केर तहँ पलग रहाया॥
जबही रात बीत गई आधी। रानी उठि चली सेवा साधी॥
रानी तब कहँ सीस नवायी। चली तबै महलन कहँ आयी॥
सेज आय रानी पौढ़ायी। डसेउ व्याल मस्तक महँ जायी॥

इन्द्रमती वचन

इन्द्रमती अस वचन सुनायी। तक्षक डसेउ मोहि कहँ आयी॥
सुन राजा व्याकुल ह्वै धावा। गुणी गारुणी वेगि बुलावा॥
राय कहे मम प्राणपियारी। लेहु चिताय जो अबकी बारी॥
तक्षक गरल दूर हो आयी। देहुँ परगना तोहि दिवायी॥

इन्द्रमती वचन छन्द

शब्द विरहुली जपेउ रानी, सुरति साहब राखिहो॥
वैद गारुणि दूर भाग्या, दूर नरपति नाहिं हो॥

मन्त्र मोहि लखाय सतगुरु, गरल मोहि न लागई ॥
होत सूर्यप्रकाश जेहिक्षण, अन्ध घोर नशावई ॥६२॥
सोरठा–ऐसे गुरु हमार, बार बार विनती करौं ॥
ठाढभयी उठिनार, राजा लखि हरषित भयो ॥६५॥

यमदूतवचन

चल्यो दूत तब उहवां जायी। जहँ ब्रह्मा विष्णु महेश रहायी॥
कहे दूत विषतेज न लागा। नाम प्रतापबंध लो भागा ॥

विष्णुवचन

कहे विष्णु सुन हो यम दूता। सेतहि अंग करो तुम पूता ॥
छक करि जाइ लिवाइय रानी। वचन हमार लेहु तुम मानी ॥
कीन्हों दूत सेत सब अंगा। जलेउ नारि पहँ बहुत उमंगा ॥

यमदूतवचन

रानीसों अस वचन प्रकाशा। तुम कस रानी भई उदासा ॥
जानि बूझि कस भई अचीन्हा। दीक्षा मन्त्र तोहि हम दीन्हा॥
ज्ञानी नाम हमारो रानी। मरदो काल करौं पिसमानी॥
तक्षक काल होय तोहि खायी। तब हम राख लीन्ह तोहि आयी॥
छोड़हु पलँग गहो तुम पाई। तजहु आपनी मान बड़ाई ॥
अब हम लेन तोहि कहँ आवा। प्रभुके दर्शन तोहि करावा ॥

इन्द्रमती वचन

इन्द्रमती तब चीन्हेउ रेखा। असकछु साहिब कहेउ विशेखा॥
तीनों रेख देख चक माहीं। जर्द सेत अरु राता आहीं ॥
मस्तक ओछ देख पुनि ताको। भयो प्रतीत वचनको साको॥
जाहु दूत तुम अपने देशा। अब हम चीन्हेउ तुम्हारो भेसा॥
काग रूप जो बहुत बनाई। हंस रूप शोभा किमि पाई॥
तस हम तोरा रूप निहारा। है समर्थ बड़ गुरू हमारा ॥

यमदूतवचन

यह सुन दूत रोष बड़ कीन्हा। इन्द्रमतीसों बोले लीन्हा ॥
बार २ तो कहँ समुझावा। नाहिंन समुझत मती हिरावा॥
बोला वचन निकट चलि आवा। इन्द्रमती पर थाप चलावा ॥
थाप चलाय सुमुखपर मारा। रानी खसि परि भूमि मझारा॥

इन्द्रमती वचन

इन्द्रमती तब सुमिरण लाई। हे गुरु ज्ञानी होहु सहाई ॥
हमकहँ काल बहुत विधि ग्रासा। तुमसाहिब काटो यमफांसा॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

सुनत पुकार मुनि रहो न जायी। सुनहु धर्मनि यह मोर सुभायी॥
रानी जबही कीन्ह पुकारा। तब छिन में तहांहि पगुधारा॥
देखत रानी भयी हुलासा। मनते भाग्यो कालको त्रासा॥
आवत हमरे काल पराया। भयी शुद्ध रानीकी काया ॥

इन्द्रमतीवचन

पुनि कह इन्द्रमती कर जोरी। हे प्रभु सुनु विनती एक मोरी॥
चीन्हि परी मोहियमकी छाहीं। अब यहि देश रहब हम नाहीं॥
हे साहिब लै चलु निज देशा। तहवां है बहु काल कलेशा ॥
इहि विधि कही भली उदासा। अबहीं लै चलु पुरुषके पासा॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

प्रथमहिं रानी. कीन्हो संगा। मेटचो काल कठिन परसंगा॥
तबही टीका पूर भराया। ले रानी सतलोक सिधाया॥
ले पहुँचायो मान सरोवर। जहवां कामिनि करहिं कलोहर॥
अमी सरोवर अमी चखायो। सागर कबीर पांव परायो ॥
तेहि आगे सुरतिको सागर। पहुँची रानी भई उजागर॥
लोक द्वार ठाढ़े तब कीनी। देखत रानी अति सुख भीनी॥
हंस धाय अंकमें लीन्हा। गावहिं मंगल आरति कीन्हा॥

सकल हंस कीना सनमाना । धन्य हंस सतगुरु पहिचाना॥
मल तुम छोड़ेउ कालका फंदा । तुम्हारो कष्ट मिट्यो दुख द्वंदा॥
चलो हंस तुम हमारे साथा । पुरुष दरश करि नावहु माथा॥
इन्द्रमती आवहु संग मोरे । पुरुष दरश होवें अब तोरे॥
इन्द्रमती अरु हंस मिलाहीं । करहिं कुतूहल मंगल गाहीं॥
चलत हंस सब अस्तुति लावें । अब तो दरश पुरुषको पावें॥
तब हम पुरुष सन विनती लावा । देहु दरस अब हंस ढिग आवा॥
देहु दरश तिहिं दीनदयाला । बंदीछोर सु होहु कृपाला॥
बिकस्यो पुहुप उठी अस बानी । सुनहु योग संतायन ज्ञानी॥
हंसन कहँ अब आव लिवाई । दरश कराइ लेउ तुम आई॥

छन्द

ज्ञानीखाउ हंस लग तब, हंस सकला ले गये॥
पुरुषदर्शन पाय हंसा, रूप शोभा तब भये॥
करहिं दंडवत हंस सबही, पुरुष पहँ चित लाइया॥
अमीफल तब चार दीन्हों, हंस सब मिल पाइया॥६३॥
सो०—जस रविके परकाश, दरश पायपंकज खुले॥
तैसै हंस विलास, जन्म जन्म दुखमिटि गयो॥६६॥

इन्द्रमतीको लोकमें पहुँच पुरुष और करुणामयको एकही रूपमें देखकर चकित होना

पुरुष कांति जब देखेउ रानी । अद्भुत अमी सुधाकी खानी॥
गदगद होय चरण लपटानी । हंस सुबुद्धि सुजन गुणज्ञानी॥
दीनों शीश हाथ जिव मूला । रविप्रकाश जिमि पंकज फूला॥

इन्द्रमती वचन

कह रानी तुम धनिकरुणामय । जिमिभ्रम मेटि आनियहिठामय

पुरुष वचन

कहा पुरुष रानी समझायी। करुणामय कहँ आनु बुलाई॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

नारि धाय आई मो पासा। महिमा देखि चकित भये दासा॥

इन्द्रमतीवचन

कह रानी यह अचरज आही। भिन्न भाव कछु देखों नाहीं॥
जे कोइ कला पुरुष कहँ देखा। करुणामय तन एक विशेखा॥
धाय चरण गह हंस सुजाना। हे प्रभु तब चरित्र सब जाना॥
तुम सतपुरुष दास कहलाये। यह शोभा कस कहां छिपाये॥
मोरे चित यह निश्चय आई। तुमहि पुरुष दूजा नहिं भाई॥
सो मैं आय देख यहि ठाई। धन समरथ मुहिं लिया जगाई॥

इन्द्रमती स्तुति करती है। छन्द

तुम धन्य हो दयानिधान सुजान नाम अचिंतयं॥
अकथ अविचलअमरअस्थितअनघअजसुआदियं॥
असंशय निःकाम बाम अनाम अटल अखंडितं॥
आदि सबके तुमहि प्रभु हो सर्व भूतसमीपतं॥६४॥
सो०–मोपर भये दयाल, लियहु जगाई जानि निज॥
काटेहु यमको जाल, दीन्हो सुखसागरकरी॥५७॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

संपुट कमल लगो तेहि बारा। चले हंस निज दीप मँझारा॥

करुणामय (ज्ञानी) वचन इन्द्रमतीप्रति

ज्ञानी बूझें रानी बाता। कहो हंस तुम्हरो विख्याता॥
अब दुख द्वंद तोर मिटि गयऊ। षोडश भानु रूप पुनि भयऊ॥
ऐसे पुरुष दया तोहि कीन्हा। संशय सोग मेटि तुव दीन्हा॥

इन्द्रमतीका अपने पति राजा चन्द्रविजयको लोकमें लानेके लिये
विनती करना इन्द्रमती वचन

इन्द्रमती कह दोउ कर जोरी। हे साहिब इक विनती मोरी॥
तुम्हरे चरण भागते पायी। पुरुष दर्श कीन्हा हम आयी॥
अंग हमार रूप अति सोही। इक संशय व्यापे चित मोही॥
मो कहँ भयो मोह अधिकारा। राजापति आहि हमारा॥
आनहु ताहि हंसपति राई। राजा मोर कालमुख जाई॥

करुणा वचन

कहे ज्ञानी सुन हंस सुजाना। राजा नहिं पाये परवाना॥
तुम तो हंसरूप अब पाया। कौनकाज कहँ राव बुलाया॥
राजा भाव भक्ति नहिं पाया। सत्वहीन भव भटका खाया॥

इन्द्रमती वचन

हे प्रभु हम जग माँह रहेऊ। भक्तितुम्हारि बहुत विधि करेऊ॥
राजा भक्ति हमारी जाना। हम कहँ बरजेउ नहीं सुजाना॥
कठिन भाव संसार सुभाऊ। पुरुष छोड़ कहु नारि रहाऊ॥
सब संसार देहि तिहि गारी। सुनतहि पुरुष डार तेहि मारी॥
राज काज अतिमान बड़ाई। पाखंड क्रोध और चतुराई॥
साधु संतकी सेवा करऊ। राजकेर त्रास ना डरऊ॥
सेवा करौं संतकी जबहीं। राजा सुनि हरषित हो तबहीं॥
जो मोहि तजि न देता राजा। तो प्रभु मोर होत किमि काजा॥

छन्द

रायकी हम हती प्यारी, मोहिं कबहुँ न बरजेऊ॥
साधु सेवा कीन्ह नित हम, शब्द मारग चीन्हेंऊ॥
चरण मो कहँ मिलत कैसे, मोहि बरजत रायजो॥
नामपाननमिलत मोकहँ, कैसे सुधरत काजजो॥ ६५॥

सो०-धन्य राय सुज्ञान, आनहु ताहि हंस ॥
तुम गुरुदयानिधान, भूपति बंद छुड़ाइये ॥६८॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

सुन ज्ञानी बहुतै विहँसाये । चले तुरंग बार नहिं लाये ॥
गढगिरनार बेगि चलि आया । नृपति केरि अवधी नियराया ॥
घेर्यो ताहि लेन यमराई । राजहि देत कष्ट बहुताई ॥
राजा परे गाढ़ महँ आया । सतगुरू कहे तहां गुहराया ॥
घोड़े नृप नाहीं यमराई । ऐसे भक्ति चूक है भाई ॥
भक्ति चूक कर ऐसे ख्याला । अवधि पूर यम करे विहाला ॥
चन्द्रविजयका करगहि लीन्हा । तत्क्षण लोक पयाना दीन्हा ॥
रानी देखि नृपति ढिग आई । राजा केर गह्यो तब पाई ॥

इन्द्रमती वचन

इन्द्रमती के सुनहु भुवारा । मोहि चीन्हों मैं नारि तुम्हारा ॥

राजा चन्द्रविजय वचन

राय कहें सुनु हंस सुजाना । वरण तोर षोडश शशिमाना ॥
अंग अंग तोरे चमकारी । कैसे कहों तोहि मैं नारी ॥
तुम तो भक्त कीन्ह भल नारी । हमहू कहँ तुम लीन्ह उबारी ॥
धन्य गुरु अस भक्ति दृढ़ाई । तोरि भक्ति हम निज घर पाई ॥
कोटिन जन्म कीन्ह हम धर्मा । तब पाई अस नारि सुकर्मा ॥
हम तो राजकाज मनलाया । सतगुरु भक्ति चीन्ह नहिं पाया ॥
जो तुम मोरि होत ना नारी । तो हम जात नरककी खानी ॥
तुव गुण मोहि वरणि ना जाई । धनगुरु धन्य नारि हम पाई ॥
जस हम तो कहँ पायउ नारी । तैसे मिले सकल संसारी ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

सुनत वचन ज्ञानी वहसायी । चन्द्रविजय कहँ वचन सुनायी ॥

करुणा मय वचन

सुनो राय तुम नृपति सुजाना। जो जिव शब्द हमारा माना॥
ते पुनि आय पुरुष दरबारा। बहुरि न देखे वह संसारा॥
हंस रूप होवे नर नारी। जो निजमाने बात हमारी॥
पुरुष दर्श नरपति चितलायी। हंस रूप शोभा अतिपायी॥
षोडश भानु रूप नृप पावा। जानुमयंकम ढार बनावा॥

धर्मदासवचन छन्द

धर्मदास विनती करे, युग लेख जीव सुनायऊ॥
धन्य नाम तुम्हारा साहिब, राय लोक समायऊ॥
तत्त्वभाव न गहेउ राजा, भक्ति तुव निजठानिया॥
नारिभक्ति प्रतापते, यमराजसे नृप आनिया॥६६॥
सो०-धन्यनारिकोज्ञान,लीन्ह बुलायस्वन्नृपति कहँ॥
आवागमन नशान, जगमें बहुरि न आइया॥६९॥
ता पीछे पुनि का प्रभु कीना। सोई कथा कहो परबीना॥
कैसे पुनि आये भवसागर। सो कहिये हंसन पतिनागर॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

धर्मनि पुनि आये जगमाहीं। रानी पति लै गये तहांहीं॥
राख्यो ताहि लोक मंझारा। तत छिन पुनि आयउ संसारा॥
काशी नगर तहां चलि आये। नाम सुदरशन सुपच जगाये॥

सुपच सुदर्शनकी कथा

नाम सुदर्शन सुपच रहाई। ता कहे हम सतशब्द दृढाई॥
शब्द विवेकी संत सुहेला। चीन्हा मोहि शब्दके मेला॥
निश्चय वचन मान तिन्ह मोरा। लखि परतीत वंदि तिहि छोरा॥
नाम पान दियो मुक्ति सँदेशा। मेट्यो सकल काल कलेशा॥

शब्द[१] ध्यान तेहि दीन्ह दृढाई । हरषित नाम सुमिरे चितलाई ॥
सतगुरु भक्ति करे चितलाई । छोडी सकल कपट चतुराई ॥
तात मात तेहि हर्ष अपारा । महाप्रेम अतिहित चितधारा ॥
धर्मनि यह संसार अँधेरा । विनु परिचय जिव यमको चेरा ॥
भक्ति देखि हर्षित हो जायी । नाम पान हमरो नहिं पाई ॥
प्रगट देखि चीन्हे नहिं मूढ़ा । परे कालके फन्द अगूढ़ा ॥
जैसे श्वान अपावन रांचेउ । तिमिजगअमीछोड़िविषखांचेउ
नृपति युधिष्ठिर द्वापर राजा । तिन पुनि कीन्ह यज्ञको साजा ॥
बन्धु मार अपकीरति कीन्हा । ताते यज्ञ रचनके चित दीन्हा ॥
कृष्ण केर जब आज्ञा पाई । तब पांडव सब साज मँगाई ॥
यज्ञकी सामग्री गहि सारी । जहँ तहँते सब साधु हँकारी ॥
पाण्डव प्रति बोले यदुपाला । पूरन यज्ञ जान तिहिकाला ॥
घण्ट अकाश बजत सुनि आवे । यज्ञको फल तब पूरन पावे ॥
संन्यासी वैरागी झारी । आवे ब्राह्मण औ ब्रह्मचारी ॥
भोजन विविध प्रकार बनाई । परम प्रीतिसे सबहिं जेवांई ॥
इच्छा भोजन सब मिलि पावा । घण्ट न बाजा राय लजावा ॥
जबहि घण्ट न बाज अकाशा । चकित भयो राय बुधिनाशा ॥
भोजन कीन सकल ऋषिराया । बजा न घण्ट भूप भ्रम आया ॥
पांडव तबहिं कृष्णपह गयऊ । मन संशय करि पूछत भयऊ ॥

युधिष्ठिर वचन

करिके कृपा कहो यदुराजा । कारण कौन घण्ट नहिं बाजा ॥

कृष्ण उत्तर

कृष्ण अस कारण तासु बताया । साधू कोइ न भोजन पाया ॥

---

१ "शब्द ध्यान" के बदले किसी प्रतियोंमें "सुरति ध्यान" लिखा है ।

युधिष्ठिरवचन

चकित भै तब पाण्डव कहेऊ। कोटिन साधु भोजन लहेऊ॥
अब कहँ साधु पाइय नाथा। तिनते तब बोले यदुनाथा॥

कृष्ण वचन

सुपच सुदर्शनको ले आवो। आदरमान समेत जिमावो॥
सोई साधु और नहिं कोई। पूरन यज्ञ जाहिते होई॥

कबीरवचन धर्मदास प्रति

कृष्ण आज्ञा जब अस पयऊ। पाण्डव तब ताके ढिग गयऊ॥
सुपच सुदर्शनको ले आये। विनय प्रीतिसे ताहि जेवांये॥
भूपभवन भोजन कर जबहीं। बजा आकाशमें घंटा तबहीं॥
सुपच भक्त जब ग्रास उठावा। बाजो घण्ट नाम परभावा॥
तबहुँ न चीन्हे सतगुरु बानी। बुद्धि नाश यम हाट बिकानी॥
भक्त जीव कहँ काल सताये। भक्त अभक्त सबन कहँ खाये॥
कृष्ण बुद्धि पांडव कहँ दीन्हा। बंधु घात पांडव तब कीन्हा॥
पुनि पांडव कहँ दोष लगावा। दोष लगा तेहिं यज्ञ करावा॥
ताहूपर पुनि अधिक दुखावा। भेजि हिमालय तिन्हैं लगावा॥
चार बंधु सह द्रौपदि गहेऊ। उबरे सत्य युधिष्ठिर रहेऊ॥
अर्जुन सम प्रिय और न आना। ताकर अस कीन्हा अपमाना॥
बलि हरिचन्द्र करण बड़ दानी। काल कीन्ह पुनि तिन्हकी हानी॥
जिव अचेत आशा तेहि लावे। खसम बिसार जारको धावे॥
कला अनेक दिखावे काला। पीछे जीवन करे बिहाला॥
मुक्ति जान जिव आशा लावै। आशा बांधि कालमुख जावै॥
सब कहँ काल नचावै नाचा। भक्त अभक्त कोइ नहिं बाचा॥
जो रक्षक तेहि खोजे नाहीं। अनचीन्हे यमके मुख जाहीं॥
बार बार जीवन समुझावा। परमारथ कहँ जीव चितावा॥

अस यम बुद्धि हरी सब केरी। फंद लगाय जीव सब घेरी ॥
सत्य शब्द कोइ परखे नाहीं। यम दिशि होय लरे हम पाहीं॥
जबलगि पुरुष नाम नहिं भेटे। तब लगि जन्म मरण नहिं मेटे॥
पुरुष प्रभाव पुरुष पहँ जाई। कृत्रिम नामते यम धरिखाई॥
पुरुष नाम परवाना पाये। कालहि जीत अमर घर जावे॥

छन्द

सत नाम प्रताप धर्मनि, हंस लोक सिधावई ॥
जन्ममरणको कष्ट मेटै, बहुरि न भव जल आवई॥
पुरुषकी छबि हंस निरखहिं, लहे अति आनँद घना॥
अंशहंसमिलिकरैकुतूहल, चन्द्रकुमुदिनिसँगबना ६६
सो०—जैसेकुमुदिनि भाव, चन्द्र देखि निशि हर्षई॥
तैसइ हंस सुख पाव, पुरुष दर्शके पावते ॥ ७० ॥
नहिं मलीन मुखभाव, एक प्रभाव सदा उदित ॥
हंससदा सुख पाव, शोकमोह दुख क्षणक नहिं॥७१॥
जबै सुदर्शन ठेका पूरा। ले सत लोक पठायो सूरा॥
मिले रूप शोभा अधिकारा। हंसन संग कुतूहल सारा ॥
षोडश भानु रूप तब पावा। पुरुष दर्श सो हंस जुड़ावा॥

धर्मराय वचन

हे साहिब इक बिनती मोरा। खसम कबीर कहु बंदीछोरा॥
भक्त सुदरशन लोक पठायी। पीछे साहिब कहां सिधायी ॥
सो सतगुरु कहो मुहि संदेशा। सुधा वचन सुनि मिटै अँदेशा॥

कबीरवचन

अब सुनु धर्मनि परम पियारा। तुमसों कहौं अलग व्यवहारा॥
द्वापर गत कलियुग परवेशा। पुनि हम चल जीवन उपदेशा॥
धर्मराय कहँ देख्यो आई। मोहि देखि यम गयो मुर्झाई॥

धर्मराय वचन

कहे धर्म कस मोहिं दुखावहु । अच्छ हमार लोक पहुँचावहु॥
तीनों युग गवने संसारा । भवसागर तुम मोर उजारा॥
हारी वचन पुरुष मोहि दीन्हा।तुम कस जीव छुड़ावन लीन्हा॥
और बंधु जो आवत कोई । छिनमहँ ताकहँ खांव बिलोई॥
तुमते कछू न मोर बसाई । तुम्हरे बल हंसा घर जाई ॥
अब तुम फेर जाहु सगमाहीं । शब्द तुम्हार सुनै कोउ नाहीं॥
करम भरम मम असकै ठाटा। ताते कोई न पावै बाटा ॥
घर घर भरम भूत उपजावा । धोखा दै दै जीव नचावा ॥
भरत भूत है सब कहँ लागे । तोहि चिन्है ताकहँभ्रम भागे॥
मद्य मांस खावै नर लोई । सर्व मांस प्रिय नरको होई ॥
आपन पंथ मैं कीन परगासा। मांस मद्य सब मानुष ग्रासा॥
चण्डी जोगिन भूत पुजाओं ।यही भ्रम है जग जहँ माडाओं
बांधि बहुफंदहिं फन्द फन्दाओ।अंतकाल कर सुधि बिसराओ॥
तुम्हरी भक्ति कठिन है भाई । कोइ न मनिहैं कहौं बुझाई॥

ज्ञानी वचन

धर्मरायते बड़ छल कीन्हा।छलतुम्हार सकलो हम चीन्हा॥
पुरुष वचन दूसर नहिं होई । ताते तुम जीवन कहँ खोई ॥
पुरुष मोहि जो आज्ञा देही । तो सब होय नाम सनेही ॥
ताते सहजहिं जीव चेताऊँ । अंकुरी जीवसकल मुकताऊँ॥
कोटि फन्द जो तुम रचिराखा।वेद शास्त्र निज महिमा भाखा॥
प्रकट कला जो धरि जग जाऊँ। तो सब जीवनको मुकताऊँ ॥
जो अस करौं वचन तब डोलै। वचन अखंड अडोल अमोलै॥
जो जियरा अंकूरी शुभ होई। शब्द हमार मानि है सोई ॥
अंकुरी जीव सकल मुकताओं।फन्दा काटि लोक लैजाओं ॥
काटि भरम जो देहौं ताही । भरम तुम्हार मानि हैं नाहीं॥

छन्द

सत्य शब्द दिढाय सबहीं, भ्रम तोरि सब डारिहौं ॥
छलतोर सब चिन्हाइ तबहीं, नामबल जियतारिहौं ॥
मनवचनसत्य जो मोहि चीन्ही, एकतत्त्वलौंलाइहौं ॥
तवसीस तुम्हारे पांव देहीं, अमललोक जिव आइहैं ६८

सो०-मर्दहि तोरा मान, सूरा हंस सुजान कोइ ॥
सत्यशब्द सहिदान, चीन्हहि हंसहरषअती ॥७२॥

धर्मराय वचन

कहै धर्म जीवन सुखदाई । बात एक मुहि कहो बुझाई ॥
जो जिव रहे तुम्हैं लौ आई । ताके निकट काल नहिं जाई ॥
दूत हमार ताहि नहिं पावै । मूर्छित दूत मोहि पहँ आवै ॥
यह नहिं बूझ परी मोहिं भाई । तौन भेद मोहिं कहो बुझाई ॥

ज्ञानीवचन

सुनहु धर्म जो पूछेहु मोही । सो सब हाल कहो मैं तोहीं ॥
सुन धर्म तुम सत सहिदानी । सोतोसत्य शब्द आहि निर्वानी ॥
पुरुष नाम है गुप्त परमाना । प्रकट नामसत हंस बखाना ॥
नाम हमार हंस जो गहई । भवसागर सो सो निरबहई ॥
दूत तुम्हार होय बल थोरा । जब मम हंस नाम ले मोरा ॥

धर्मराय वचन

कहै धर्म सुनु अन्तरयामी । कृपा करो अब मोपर स्वामी ॥
यहि युग कौन नाम तुव होई । सो जनि मोपर राखहु गोई ॥
वीरा अंक गुप्त गन आऊ । ध्यान अंग सब मोहि बताऊ ॥
केहि कारन तुम जाहु संसारा । सोइ कहहु मोहि भेद गुन न्यारा ॥
हमहूँ जीवन शब्द चेतायब । पुरुषलोक कहँ जीव पठायब ॥
मोहिं दास आपन कर लीजे । शब्द सार प्रभु मोकहँ दीजे ॥

ज्ञानी वचन

सुनहु धर्म तुम कस छल करहू। प्रगट सुदास गुप्त छल धरहू ॥
गुप्त भेद नहिं देहौं तोहीं। पुरुष अवाज कही नहिं मोहीं॥
नाम कबीर मोर कलिमाहीं। कबीर कहत यम निकट न जाहीं

धर्मराय वचन

कहै धर्म तुम मोहिं दुरै हो। खेल एक पुन हमहु खेलै हो॥
ऐसी छल बुधि करब बनाई। हंस अनेक लेव सँग लाई ॥
तुम्हार नाम ले पंथ चलायब। यहिविधि जीवनधोखदिखायब

ज्ञानी वचन

अरे काल तू पुरुष द्रोही। छलमति कहा सुनावसि मोही॥
जो जिव होई है शब्द सनेही। छल तुम्हार नहिं लागै तेही॥
जौहरी हंस लेहिं पहिचानी। परखि हैं ज्ञान ग्रंथ मम बानी॥
जेहि जीव मैं थापब जाई। छल तुम्हार तेहि देव चिन्हाई॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

यहि सुनत धर्मराय गहु मौना। ह्वै अन्तर्धान गयो निज भौना॥
धर्मनि कठिन कालगति नन्दा। छल बुध कै जीवन कहँ फन्दा॥

धर्मदास वचन

कह धर्मनि प्रभु मोहि सुनाओ। आगल चरित्र कहि समझाओ॥

जगन्नाथ मंदिरकी स्थापनाका वृत्तान्त

कबीरवचन धर्मदासप्रति

राजा इन्द्रदमन तेहि काला। देश उड़ेसेको महिपाला ॥

सद्गुरुवचन

राजा इन्द्रदमन तहँ रहई। मंडप काज युगति सो कहई॥
कृष्ण देह छांड़ी पुनि जबही। इन्द्रदमन सपना भा तबही ॥
स्वप्नेमें हरि अस ताहि बताई। मेरो मंदिर देहु उठाई ॥
मोकहँ स्थापन कर राजा। तो पह मैं आयउ यहि काजा॥

राजा यहि विधि सपना पाई । ततक्षण मंडप काम लगाई ॥
मंडप उठा पूर्ण भा कामा । उदधि आय बोरा तेहि ठामा ॥
पुनि जब मंदिर लाग उठावा । क्रोधवंत सागर तब धावा ॥
क्षणमें धाय सकल सो बोरे । जगन्नाथको मंदिर तोरे ॥
मंडप सो षट बार बनायी । उदधि दौर तिहिं लेत डुबायी ॥
हारा नृप करि यतन उपायी । हरिमंदिर तहँ उठे न भाई ॥
मंदिरकी यह दशा विचारी । वर पूरब मन माहिं सम्हारी ॥
हम सन काल मांग अन्याई । बाचा बन्ध तहां हम जाई ॥
आसन उदधि तीर हम कीन्हा । काहू जीव न मोही चीन्हा ॥
पीछे उदधि तीर हम आई । चौरा तहँ बनायउ जाई ॥
इन्द्रदमन तब सपना पावा । जहो राय तुम काम लगावा ॥
मंडप शंक न राखो राजा । इहवाँ हम आये यहि काजा ॥
जाहु बेगि जनि लावहु बारा । निश्चय मानहु वचन हमारा ॥
राजा मंडप काम लगायो । मंडप देखि उदधि चल आयो ॥
सागर लहर उठी तिहि बारा । आवत लहर क्रोधचित धारा ॥
उदधि उमंग क्रोध अति आवे । पुरुषोत्तम पुर रहम ना पावे ॥
उमँगेउ लहर अकाशे जायी । उदधि आय चौरा नियरायी ॥
दरश हमार उदधि जब पाई । अति भय मान रह्यो ठहराई ॥

छन्द

रूप धारयो विप्रको तब, उदधि हमपहँ आइया ॥
चरण गहिके माथ नायो, सर्म हम नहिं पाइया ॥

उदधिवचन

जगन्नाथ हम भोर स्वामी, ताहिते हम आइया ॥
अपराध मेरो क्षमा कीजे, भेद अब हम पाइया ॥ ६९ ॥

सो०–तुम प्रभु दीनदयाल, रघुपति बोइल दिवाइये॥
वचन करो प्रतिपाल कर जोरै विनती करो ॥७३॥

कीन्हेउ गवन लंक रघुबीरा । उदधि बाँध उतरे रणधीरा ॥
जो कोइ करै जोरावरि आयी । अलखनिरंजन बोइल दिखाई॥
मोपर दया करहु तुम स्वामी । लेउ ओइल सुनु अन्तरयामी॥

कबीर वचन

ओइल तुम्हार उदधि हम चीन्हा। बोरहु नगर द्वारका दीन्हा ॥
यह सुनि उदधि धरे तब पांई । चरण टेकिके चले हरषाई ॥
उदधि उमङ्ग लहर तब धायी । बोरचो नगर द्वारका जाई॥
मण्डप काम पूर तब भयऊ । हरिको थापन तहवाँ कियऊ॥
तब हरि पण्डन स्वपन जनावा । दासकबीर मोहिपहँ आवा ॥
आसन सागर तीर बनायी । उदधि उमङ्ग नीरतहँ आयी॥
दरश कबीर उदधि हट जाई । यहि विधि मण्डप मोर बचाई॥
पण्डा उदधितीर चलि आये । करि अस्नान मंडप चलि आये॥
पण्डन अस पाखंड लगायी । प्रथम दरश मछेच्छ दिखायी॥
हरिके दर्शन भैं नहिं पावा । प्रथमहि हम चौरालग आवा॥
तब हम कौतुक एक बनाये । कहों वचन नहिं राखु छिपाये॥
मंडप पूजन जब पण्डा गयऊ । तहँवा एक चरित अस भयऊ॥
जहँ लग मूरति मण्डप माहीं । भये कबीर रूप धर ताहीं ॥
हर मूरति कहँ पण्डा देखा । भये कबीर रूप धर भेखा॥
अक्षत पुहुप ले विप्र भुलाई । नहिं ठाकुर कहँ पूजहुँ भाई ॥
देखि चरित्र विप्र सिर नाया । हे स्वामी तुम मर्म न पाया॥

पण्डा वचन

हम तुम काहि नहीं मनलाया । ताते मोहि चरित्र दिखाया ॥
क्षमा अपराध करो प्रभु मोरा । बिनती करों दोइ करजोरा ॥

कबीर वचन । छन्द

वचन एक मैं कहों तोसों, विप्र सुनु तू कान दे ॥
पूज ठाकुर दीन्ह आयसु, भाव दुविधा छोड दे ॥
भ्रम भोजन करे जो जिव, अंगहीन हो ताहिको॥
करे भोजन छूत राखे, सीस उलटे ताहिको ॥७०॥
सोरठा–चौराकरिव्यवहार, भ्रमाविमोचनज्ञानदृढ ॥
तहँते कियो पसार, धर्मदास सुनु कानदे ॥७४॥

धर्मदास वचन

धर्मदास कहे सतगुरु पूरा । तुम प्रसाद भयो दुख दूरा॥
जेहि विधि हरि कहँ थापउ जाई। सो साहिब सब मोहिं सुनाई॥
ता पीछे कहवाँ तुम गयऊ । कौन जीव कैसे मुकतयऊ ॥
कलयुगकेर कहो परभाऊ । और हंस परमोधेउ काऊ ॥
सो माहि वरणि कहो गुरुदेवा। कौन जीव कीन्ही तुम सेवा॥

कबीर वचन

धर्मदास तुम बूझहु भेदा । सो सब हमसों कहो निषेदा॥

चार गुरुकी स्थापनाका वृत्तांत

सुनहु सन्त यह ज्ञान अनूपा ।गज थलदेस परमोध्यो भूपा॥

रायबंकेजी

रायबंकेज नाम तेही आही । दीनेउ सार शब्द पुनि ताही॥
कीन्ह्यो ताहि जीवन कडिहारा । सो जीवनका करैं उबारा ॥

सहतेजी

शिलमिली दीप तहां चलि आये । सहतेजी एकसन्त चिताये॥
ताहूको कडिहारी दीन्हा । जब उन मोकहँ निजकर चीन्हा॥

---

१ किसी ग्रन्थमें यह चौपाई ऐसे लिखी है–
सुनो संत यह कथा अनूपा । गज अस्थल परमोध्यो भूपा ॥

चतुरभुज

तहांते चलि आये धर्मदासा। राय चतुरभुजपति जहँ बासा॥
ताकर देश आहि दरभङ्गा। परखिसि मोहि सतपर संगा॥
देखि अधीन ताहि समझावा। ज्ञान भक्ति विधि ताहि दृढ़ावा॥
दृढ़ता देखि ताहि पुनि थापा। मिला मोहि छाडि भ्रम आपा॥
मायामोह न तनिको कीन्हा। अमर नाम तब ताही दीन्हा॥
ताहूँ कहँ कडिहारी दीन्हा। चतुरभुजशब्द हेत करि लीन्हा॥

छन्द

हंस निरमल ज्ञान रहनी, गहनी नाम उजागरा॥
कुल कानि सबै बिसारि विषया, जौहरीगुण नागरा॥
चतुर्भुज बंकेज औ सहतेज, तुम चौथ सही॥
चारिहैं कडिहार जिवके, गिरानिश्चल हम कही७१॥
सो०-जम्बुदीपके जीव, तुम्हरी बांह मोकहँ मिल।
गहे वचन दृढ पीव, ताहि काल पावे नहीं॥७५॥

धर्मदास वचन

धन सत गुरु तुम मोहिं चेतावा। काल फंदसे मोहिं मुकतावा॥
मैं किंकर तुम दासके दासा। लीन्हों मोरि काटि जमफांसा॥
मोते चित अतिहरष समाना। तवगुणमोहि न जाय बखाना॥
भागी जीव शब्द तुव माना। पूरण भाग जो तुव व्रत ठाना॥
मैं अघकर्मी कुटिल कठोरा। रहेउँ अचेत भ्रम जिव मोरा॥
कहा जानि तुम मोहिं जगाये। कौने तप हम दर्शन पाये॥
सो समुझाय कहो जियमूला। रबि तब गिरा कमल मनफूला॥

धर्मदासके पिछले जन्मोंकी कथा कबीर वचन

इच्छा कर जो पूछा मोही। अब मैं गोइ न राखौं तोही॥
धर्मनि सुनहु पाछली बाता। तोहि समझाय कहों विख्याता॥

सन्त सुदर्शन द्वापर भयऊ । तासु कथा तोहिं प्रथम सुनयऊ ॥
तेहि ले गयो देशनिज जबहीं । विनती बहुत कीन तिन तबहीं ॥

सुपचवचन

कहे सुपच सतगुरु सुनलीजै । हमरे मात पिता गति दीजै ॥
बन्दी छोड़ करो प्रभु जाई । यमके देश बहुत दुख पाई ॥
मैं बहु भांति पिता समुझावा । मातु पिता परतीति न पावा ॥
बालकवत नहिं ज्ञान सिखावा । भक्ति करत नहिं मोहि डरावा ॥
भक्ति तुम्हारी करन जब लागे । कबहुं न द्रोह कीन्ह मम आगे ॥
अधिक हर्ष ताही चित होई । ताते विनती करौं प्रभु सोई ॥
आनहु तेहि सत शब्द दृढ़ाई । बन्दीछोर जीव मुकताई ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

विनती बहुत संत जब कीन्हा । ताकर वचन मान हम लीन्हा ॥
ताकर विनय बहुरि जग आवा । कलियुग नाम कबीर कहावा ॥
हम इक वचन निरंजन हारा । वाचा बंध उदनि पगु धारा ॥
और दीप हंसन उपदेशा । जम्बुदीप पुनि कीन प्रवेशा ॥
सन्त सुदर्शनके पितु माता । लक्ष्मी नर हर नाम सुहाता ॥
सुपच देह छोड़ी तिन भाई । मानुष जन्म धरे तिन आई ॥

सुपचसुदर्शन माता पिताके पहला जन्म कुलपति और महेश्वरीकी कथा

सन्त सुदर्शन केर प्रतापा । मानुष देह विप्रके छापा ।
दोनों जन्म होय तब लीन्हा । पुनि विधि मिलै ताहि कहँ दीन्हा ॥
कुलपति नाम विप्रकर कहिया । नारि नाम महेसरि रहिया ॥
बहुत अधीन पुत्र हित नारी । करि अस्नान सुर्यव्रतधारी ॥
अञ्चल लै विनवै कर जोरी । रुदन करे चित सुतकह दौरी ॥
तत्क्षण हम अञ्चल पर आवा । हम कहँ देखि नारि हरषावा ॥
बाल रूप धरि भेंट्यो वोही । विप्र नारि गृह लै गइ मोही ॥

कहै नारि कृपा प्रभु कीन्हा । सूर्य व्रत करफल यह दीन्हा ॥
बहुत दिवसलग तहां रहाये । नारि पुरुष मिल सेवा लाये ॥
रहे दरिद्रते दुखी अपारा । हम मनमहँ असकीन विचारा ॥
प्रथमहि दरिद्रता इनकर टारों । पुनिभक्तिमुक्तिकरवचनउचारों ॥
जब हम पलना झटक झकोरा । मिलत सुवर्ण ताहि इकतोरा ॥
नितप्रति सोन मिलै इक तोला । ताते भये वह सुखी अमोला ॥
पुनि हम सत्य शब्द गोहराई । बहुप्रकारसे उनहिं समुझाई ॥
ता हृदये नहिं शब्द समायी । बालक ज्ञान प्रतीत न आई ॥
ताहि देह चीन्हेसि नहिं मोहीं । भयोगुप्त तहँ तन तजि वोहीं ॥

सुपच सुदर्शनके पिता माताके दूसरे जन्ममें चन्दसाहु
और ऊदाकी कथा

नारि द्विज दोई तन त्यागा । दरश प्रभाव मनुजतनु जागा ॥
पुनि दोनों भये अंशु मिलाऊ । रहहि नगर चन्द वारे नाऊ ॥
ऊदा नाम नारी कहँ भयऊ । पुरुष नाम चन्दन धरि गयऊ ॥
परसोतमते हम चलि आये । तब चन्दवारा जाइ पगटाये ॥
बालक रूप कीन्ह तेहि ठामा । कीन्हेउ ताल माहि विश्रामा ॥
कमल पत्र पर आसन लाई । आठ पहर हम तहाँ रहाई ॥
पीछे ऊदा अस्नानहि आयी । सुन्दर बालक देखि लुभाई ॥
दरश दियो देहि शिशुतनधारी । लेगई बालक निज घर नारी ॥
ले बालक गृह अपने आई । चन्दन साहु अस कहा सुनाई ॥

चन्दनसाहु वचन

कहु नारी बालक कहँ पायी । कौने विधिते इहँवा लायी ॥

ऊदावचन

कह ऊदा जल बालक पावा । सुन्दर देखि मोर मन भावा ॥

चन्दनसाहुवचन

कह चन्दनते मूरख नारी । वेगि जाहु दै बालक डारी ॥
जाति कुटुम्ब हँसिहैं सब लोगा । हँसत लोग उपजै तन सोगा ॥

कबीरवचन धर्मदास प्रति

ऊदा त्रास पुरुष कर माना । चन्दन साहु जबै रिसियाना॥

चन्दनसहुवचन धर्मदास प्रति

बालक चेरी लेहु उठाई । लै बालक जल नेहु खसाई॥

कबीर वचन धर्मदास प्रति

चल चेरी बालक कहँ लीन्हा ।जलमहँडारनताहिचितदीन्हा॥
चलि भइ मोहि पवांरन जबहीं। अन्तरधान भयो मैं तबहीं ॥
भयउ गुप्त तेहि करसे भाई । रुदन करे दोनों बिलखाई ॥
बिकल होय मन ढूंढत डोलैं ।मुग्धज्ञान कछु मुख नहिं बोलैं॥

सुपच सुदर्शनके माता पिता तीसरे जन्ममें नीमा हुए

यहिविधिबहुतदिवसचलिगयऊ।तजितनजन्मबहुरितिनपयऊ
मानुष तन जुलहा कुल दीन्हा ।दोउ संयोग बहुरि विधि कीन्हा॥
काशी नगर रहे पुनि सोई । नीरू नाम जुलाहा होई ॥
नारि गवन लावे मग सोई । जेठमास बरसाइत[१] होई ॥
नारि लिवाय आय मगमाहीं। जलअचवन गहबनिताहीं ॥
ताल नांहि पुरइन पनवारा । शिशु होय मैं तहँ पगुधारा ॥
तहां जस बालकै रहुँ पौढाई । करौं कुतूहल बाल स्वभाई॥
नीमा दृष्टि परी तिहि ठाऊ ।देखत दरश भयो अति चाऊ॥
जिमिरविदरशपदुमबिगसाना। धाय गयो धन रंक समाना॥
धाय गही कर लिया उठायी। बालक लै नीरूपहँ आयी ॥
जुलहा रोष कीन्ह तेहि वारी। बेगि देहु तुम बालक डारी॥
हर्ष गुनावन नारी लाई ।तब हम तासो वचन सुनाई॥

---

१ बरसाइत वटसावित्रीका अपभ्रंश है । यह वटसावित्री व्रत ज्येष्ठ शुद्धपूर्ण-मासीको होता है इसकी विस्तारपूर्वक कथा महाभारतमें है । उसी दिन कबीर साहब नीमा और नूरीको मिले थे इस कारणसे कबीर पंथियोंमें बरसाइत महातम पंथकी कथा प्रचलित है । और उस दिन कबीरपंथी लोग बहुत उत्सव मनाते हैं

छन्द

सुनहु वचन हमारे नीमा, तोहि कहु समझायके ॥
प्रीत पिछली कारणे तुहि, दरस दीन्हो आयके ॥
आपने गृह मोहि लै चलु, चीन्हिके जो गुरु करो ॥
देऊँ नाम दृढाय तो कहँ, फन्द यमके नापरो ॥७२॥
सो०-सुनत वचन अस नारि, नीरूत्रास न राखेउ ॥
लै गइ गेह मँझार, काशि नगर तब पहुँचेउ ॥७६॥

नारी न मान त्रास तेहि केरा । रंक धनद सम लै चलि डेरा ॥
जोलहा देखि नारि लौलीना । लेइ चलो अस आयसु दीना ॥
दिवस अनेक रहे तेहि ठाईं । कैसहु तेहि परतीत न आई ॥
बहुत दिवस तेहि भवन रहावा । बालक जान न शब्द समावा ॥

सुपच सुदर्शनके माता पिताका चौथे जन्ममें मथुरामें
प्रगट होकर सत्यलोक जाना

बिन परतीत काजा नहिं होई । दृढ कै गहहु परतीत बिलोई ॥
ताहि देह पुनि मोहि न चीन्हा । जानि पुत्र मोहि संग न कीन्हा ॥
तजि सो देह बहुरि जो भाई । देह धरी सो देहुँ चिन्हाई ॥
जुलहाकी तब अवधि सिरानी । मथुरा देह धरी तिन आनी ॥
हम तहँ जाय दरश तिन दीन्हा । शब्द हमारा मानसों लीन्हा ॥
रतना भक्ति करे चितलाई । नारि पुरुष परवाना पाई ॥
ता कहँ दीन्हेउ लोक निवासा । अंकूरी पठये निज दासा ॥
पुरुष चरण भेटे उरलाई । शोभा देह हंसकर पाई ॥
देखत हंस पुरुष हरषाने । सुकृति अंश कही मन माने ॥
बहुत दिवस लगि लोक रहाये । तब लगि काल जीव संताये ॥
जीवनदुःखअतिशय भयो भाई । तबही पुरुष सुकृत हंकराई ॥

आज्ञा कीन्हा जाहु संसारा । काल अपार बलजीव दुखारा॥
लोक संदेशा ताहि सुनाओ । देइ नाम जीवन मुकताओ॥
आज्ञा सुनत सुकृत हरषाये । तुरतहिं लोक पयाना आये॥
सुकृत देखि काल हरषाई । इन कहँ तो हम लेब फँसाई॥
करि उपाय बहुत तब काला । सुकृत फँसाय जलमहँ डाला॥
बहुत दिवस गयो जब बीता । एकहु जीव न कालहिं जीता॥
जीव पुकार सतलोक सुनाये । तबहीं पुरुष मोकहँ हँकराये॥

कबीरसाहबका धर्मदासजीको चितानके लिये लोकसे पृथ्वीपर
आना पुरुष वचन

पुरुष अवाज उठी तिहि बारा। ज्ञानी वेगि जाहु संसारा ॥
जीवन काज अंश पठवायी । सुकृत अंश जग प्रगटे जायी॥
दीन्ह आज्ञा तेहिको भाई । शब्द भेद वाही समझाई ॥
लावहु जीवन नाम अधारा । जीवन खेइ उतारो पारा ॥
सुनत आज्ञा वहि कीन पयाना। बहुरि न आये देश अमाना ॥
सुकृत भवसागर चलि गयऊ। कालजालते सुधि बिसरयऊ ॥
तिनकहँ जाय चितावहु ज्ञानी। जेहिते पंथ चले निरवानी ॥
वंस ब्यालिस अंस हमारा । सुकृत गृह लैहैं औतारा ॥
ज्ञानी वेगि जाहु तुम अंसा । अब सुकृत अंसकर मेटहु फंसा॥

कबीर वचन

चलेहु हम तव सीस नवाई । धर्मदास अब तुम लग आई॥
धर्मदास तुम नीरू औतारा । आमिन नीम प्रगट बिचारा॥
तुम तो आहू प्रिय मम अंसा । जाकारन हम कीन्हा बहुसंसा॥
पुरुषहि आज्ञा तुमरे ढिग आये। पिछली हेतु पुनि याद कराये॥
यहि संयोग हम दर्शन दीन्हा । धर्मनि अबकी तुम मोहि चीन्हा।
पुरुष अवाज कहूँ तुम पासा । चीन्हेहु शब्द गहो बिश्वासा॥
धाय परे चरणन धर्मदासा । नैन बारि भर प्रगट प्रगासा॥

धरहि न धीरज बहुत संतोषा । तुम साहिब मेटुहु जिवधोखा ॥
धरे न धीरज बहुत प्रबोधे । बिछुरिजननिजिमिमिल्यो अबोधे
युग पग गहे सीस भुई लाये । निपट अधीरन उठत उठाये ॥
बिलखत बदन वचन नहीं बोले । सुरति चरणते नेक न डोले ॥
निरखत बदन बहुरोपदगहहीं । गदगद हृदय गिरा नहिं कहहीं ॥
बिलखत बदन स्वास नहिं डोले । उनसुनिदशा पलक नहिं खोले ॥

धर्मराज वचन

बहुरि चरण गहि रोवहिं भारी । धन्य प्रभु मोहितारनतनधारी ॥
धरि धीरज तब बोले सम्हारी । मोकहँ प्रभु तारन पगधारी ॥
अब प्रभु दया करहु यहि मोही । एकौ पल ना बिसरों तोही ॥
निशिदिन रहों चरण तुम साथा । यह बर दीजै करहु सनाथा ॥

कबीर वचन

धर्मदास निह संशय रहहू । प्रेम प्रतीति नाम दिढ़ गहहू ॥
चीन्हेउ मोहि तोर भ्रम भागा । रहै सदा तुम दृढ़ अनुरागा ॥
मन बचकर्म जाहि जो गहई । सो तेहि तज अंत कस रहई ॥
आपन चाल बिना दुख पावे । मिथ्या दोष गुरु कहँ लावे ॥
पंथ सुपंथ गुरु समझावे । शिष्य अचेतन हृदय समावे ॥
तुम तो अंश हमारे आहू । बहुतक जीव लोक ले जाहू ॥
चार माहि तुम अधिक पियारे । किहि कारण तुम शोचविचारे ॥
हम तुमसों कछु अन्तर नाहीं । परक शब्द देखो हियमाहीं ॥
मन बच कर्म मोहि लौ लावे । हृदये दुतिया भाव न आवे ॥
तुम्हरे घट हम वासा कीन्हा । निश्चय हम आपन कर लीन्हा ॥

छन्द

आपनो कर लीन्ह धर्मनि, रहो निःसंशय हिये ॥
करहु जीव उबार दृढ है, नाम अविचल तुहि दिये ॥

मुक्ति कारण शब्द धारण पुरुष सुमिरण सारहो ॥
सुरति बीरा अंकधीरा जीविका निस्तार हो ॥७६॥
सो०–तुमतौ हौ धर्मदास,जंबुदीप कड़िहार[1] जिव ॥
पावे लोक निवास, तुहि समेत सुमिरे मुझे ॥७७॥

धर्मदास वचन

धन सतगुरु धन तुम्हरी वानी।मुहिं अपनायदीन्हगनि आनी॥
मोहिं आय तुम लीन्ह जगायी। धन्य भाग्य हम दर्शन पायी॥
धन साहब मुनि शाप न कीन्हा।मम शिर चरण सरोरुह दीन्हा॥
मैं आपन दिन शुभ करिजाना। तुम्हरे दरश मोक्ष परमाना ॥
अब अस दया करहु दुख भंजन। कबहुं मोहि न धरे निरंजन ॥
काल जाल जौनी विधि छूटे। यमबंधन जौनी विधि टूटे ॥
सोई उपाय प्रभु अब कीजे।सार शब्द बताय मोहि दीजे॥

कबीर वचन

धर्मदास तुम सुकृत अंशा। लेइ पान अब मेटहु संशा ॥
धर्मदास आपन करि लेऊँ। चौका करि परवाना देऊँ ॥
तिनका तुडाय लेहु परवाना। कालदशा छुटे अभिमाना ॥
शालिग्रामको छाड़हु आसा।गहि सत शब्द होहु तुम दासा॥
दश औतार ईश्वरी माया।यह सब देखु कालकी छाया॥
तुम जगजीव चितावन आये। काल फंद तुम आय फसाये॥
अबहूँ चेत करो धर्मदासा। पुरुषहिं शब्द करो परकासा॥
ले परवाना जीव चिताओ। काल जालते हंस मुकताओ॥
यहि कारज तुम जगमें आये।अब न करहु दोसर मन भाये॥

---

१ कर्णधार मल्लाह नाव खेकर पार उतारनेवाला भवसागर से गुरु पार उतारते हैं इस कारण उन्हें कडिहार कहते हैं।

छन्द

चतुर्भुज बंकेज सहतेज, और चौथे तुम अहौ ॥
चार गुरुकडिहार जगके वचन यह निश्चय गहौ ॥
यही चार अंश संसारमें, जीव काज प्रगटाइया ॥
स्वसंवेदसोइनसंग दियो, जेहि सुनि काल भगाइया॥७४॥
सोरठा—चारोंमें धर्मदास, जम्बुदीपके गुरु सहि ॥
व्यालिस वंश विलास तरैं जीव तेहि शरणगहि॥७८॥

आरतीविधिवर्णन

कबीर साहबका चौका करके धर्मदासको परवाना देना

धर्मदास वचन

धर्मदास पद गहि अनुरागा। हो प्रभु मोहि कीन्ह सुभागा॥
हे प्रभु! नहि रसना प्रभुताई। अमित रसन गुण बरनि न जाई॥
महिमा अमित अहै तुम स्वामी। केहि विधि बरनों अंतरयामी॥
मैं सबविधिअयोग्य अविचारी। मुझ अधमहिं तुम लीन उबारी॥
अब चौका भेद कहो मुहि स्वामी। काहि कहहु तिनका सुखधामी॥
जो तुम कहो करौ मैं सोई। तामहँ फेर न परि हैं कोई॥

कबीरवचन चौकाका साज

धर्मदास सुनु आरति साजा। जाते भागि चले यमराजा॥
सात हाथको बस्तर लाओ। श्वेत चँदोवा छत्र तनाओ॥
घर आंगन सब शुद्ध कराओ। चौकाकरि चन्दन छिड़काओ॥
तापर आँटा चौक पुराओ। सवासेर तंदुल लै आओ॥
स्वेत सिंहासन तहां बिछाई। नाना सुगंध धरु तहां लगाई॥
स्वेत मिठाई स्वेतै पाना। पुंगीफल स्वेतहि परमाना॥
लौंग इलायची कपुर सँवारो। मेवा अष्ट केरा पनवारो॥

जिन्ह पीछे नरियल लै आओ। यह सब साज सुआनि धराओ॥
जो कछु साहब आज्ञा कीन्हा। धर्मदास सब कछु धरि दीन्हा॥
बहुरि धर्मनि विनती अनुसारा। अब समरथ कहु मुक्ति विचारा॥
सबहिं वस्तु मैं आनेउँ साँई। जस तुम निजमुख भाखि सुनाई॥
सुनत वचन साहब हर्षाने। धन्य धर्मनि अब तुम मनमाने॥

चौका विधि ते पोति प्रभु, आसन बैठिया जायहो॥
लघु दीरघ जीव धर्मनि, सबहिं लीन्ह बुलाय हो॥
नारिपुरुष एक मति करि, लीन नरियल हाथ हो॥
गुरुसन्मुखधरि भेंट कीन्हा, बहुविधि नाये माथ हो॥
सो०—सतगुरुचरणमयंक, चितचकोर धर्मनि कहा॥
मेटयोसबमनशंक, भावभक्ति अतिचितधन्यो॥७९॥

चौका कीन शब्द धुनि गाजा। ताल मिरदंग झांझरी बाजा॥
धर्मदासको तिनका तोरा। जाते काल न पकरे छोरा॥
सत्य अंक साहब लिख दीना। ततछिन धर्मदास गहिलीन्हा॥
धर्मदास परवाना लीन्हा। सात दण्डवत तबहीं कीन्हा॥
सतगुरु हाथ माथ तिहि दीन्हा। दे उपदेश किरतारथ कीन्हा॥

कबीर साहबका धर्मदासजीको उपदेश देना

कहैं कबीर सुनो धर्मदासा। सत्यभेद मैं कियो परकासा॥
नाम पान तुहि दीन लखाई। कालजाल सब दीन मिटाई॥
अब सुनु रहन गहनकी बाता। बिनजाने नर भटका खाता॥
सदा भक्ति करो चितलाई। सेवो साधु तजि मान बड़ाई॥
पहले कुल मरजादा खोवो। भयसे रहित भक्त तब होवो॥
सेवा करो छाँडि मत दूजा। गुरुकी सेवा गुरुकी पूजा॥

गुरुसे करे कपट चतुराई । सो हंसा भव भरमे आई ॥
तातें गुरुसे परदा नाहीं । परदा करे रहे भवमाहीं ॥
गुरुके वचन सदा चित दीजे । माया मोह सुकोर न भींजे ॥
यहि रहनी भव बहुरि न आवे । गुरुके चरणकमल चितलावे ॥

छन्द

सुनुहु धर्मदास दृढकै गहो, एक नामकी आस हो ॥
जगत जालबहु जञ्जाल है, काल लगाये फांस हो ॥
पुरुष नाम परताप धर्मनि, सुमति होय सुधि लहे ॥
नारि नर परिवारसबमिलि, काल कराल तब ना रहे ७९
सोरठा—तुम घरजेतिक जीव, सब कहँ बेगि बुलावहू ॥
सुरति धरो दृढ पीव, बहुरि काल पावे नहीं ८० ॥

धर्मदास वचन

हे प्रभु तुम जीवनके मूला । मेटेउ मोर सकल तन सूला ॥
आहि नरायण पुत्र हमारा । सौंपहु ताहि शब्द टकसारा ॥
इतना सुनत सद्गुरुहँसि दीन्हा । भाव प्रगट बाहर नहिं कीन्हा ॥

कबीर वचन

धर्मदास तुम बोलाव तुरन्ता । जेहिको जानहु तुम शुद्धअन्ता ॥
धर्मदास तब सबहिं बुलावा । आय खसमके चरण टिकावा ॥
चरण गहो समरथके आई । बहुरि न भव जल जन्मो भाई ॥
इतना सुनत बहुत जिव आये । धाय चरण सतगुरु लपटाये ॥
यक नहिं आये दास नरायन । बहुतक आय परे गुरु पायन ॥
धर्मदास सोच मन कीन्हा । काहे न आयो पुत्र परबीना ॥

नारायणदासजीका कबीरसाहबको आज्ञा करना

धर्मदास वचन अपने दासदासियोंपर

दास नरायन पुत्र हमारा । कहाँ गयो बालक पगुधारा ॥

ताकहँ ढूँढ़ लाहु कोइ जाई । दास नरायन गुरुपहँ आई ॥
रूपदास गुरु कीन्ह प्रतीता । देखहु जाय पढ़त जहँ गीता ॥
वेगि जाइ कहु तुम्हें बुलायी । धर्मदास समरथ गुरु पायी ॥
सुनत सँदेशी तुरतहि जायी । दास नरायण जहां रहायी ॥

संदेशीवचन नारायणदासप्रति

चलहु वेगि जनि बार लगाओ । धर्मदास तुम कहँ हँकराओ ॥

नारायणदास वचन

हम नहिं जायँ पिताके पासा । वृद्ध भये सकलौ बुद्धि नाशा ॥
हरिसम कर्ता और कहँ आही । ताको छोड़ जपैं हम काही ॥
वृद्ध भये जुलहा मन भावा । हम मन गुरु विठलेश्वर पावा ॥
काहि कहौं कछु कहो न जाई । मोर पिता गया बौराई ॥

संदेशी वचन

चल संदेशी आया तहँवा । धर्मदास बैठा रह जहँवा ॥
कह संदेशी रह अरगाये । दास नरायण नाहीं आये ॥
यह सुन धर्मदास पगुधारा । गये तहां जहँ बैठे बारा ॥

धर्मदासवचन नारायणदासप्रति । छन्द

चलहु पुत्र भवन सिधारहु, पुरुष साहिब आइया ॥
करहु विनती चरण टेकहु, कर्म सकल कटाइया ॥
सतगुरुकरोतिहिआयकहुँचलु, बेगितजिअभिमानरे ॥
बहुरि ऐसो दाव बने नहिं, छोडि दे हठ बाबरे ॥७७॥
सो०-भलसतगुरु हम पाव, यमके फंद कटाइया ॥
बहुरि न जनमहँ आव, उठहु पुत्र तुम वेगिही ८१

नारायणदास वचन

तुम तो पिता गये बौराई । तीजे पन जिंदा गुरु पाई ॥

राम नाम सम और न देवा । जाकी ऋषि मुनि लावहिं सेवा ॥
गुरु विठलेश्वर छांडेउ हीता । वृद्ध भये जिंदा गुरु कीता ॥

धर्मदास वचन

बांह पकर तब लीन्ह उठाई । पुनि सतगुरुके सन्मुख लाई ॥
सतगुरु चरण गहो रे बारा । यमके फन्द छुड़ावन हारा ॥
बहुरि न योनी संकट आवे । जो विन नाम शरणगत पावे ॥
तज संसार लोक कहँ जाई । नाम पान गुरु होय सहाई ॥

नारायणदास वचन

तब मुख फेरे नरायन दासा । कीन्ह मलेच्छ भवनपरगासा ॥
कहँवाते जिंदा ठग आया । हमरे पितहिं डारि बौराया ॥
वेद शास्त्र कहँ दीन उठाई । आपनि महिमा कहत बनायी ॥
जिंदा रहे तुम्हारे पासा । तो लग घरकी छोड़ी आसा ॥
इतना सुनत धर्मदास अकुलाने । ना जानो सुत का मत ठाने ॥
पुनि आमिन बहुविधि समझायो । नारायण चित एकु न आयो ॥
तब धर्मदास गुरु पहँ आये । बहुविधिते पुनि बिनती लाये ॥

धर्मदास वचन कबीर वचन प्रति

कहो प्रभु कारन मोहि बताई । कोइ कारन पुत्र दुचिताई ॥

कबीर वचन

तब सतगुरु बोले मुसकायी । प्रथमहिं धर्मनि भाख सुनायी ॥
बहुरि कहों सुनहु दे कानो । यामहँ कछु अचरज ना मानो ॥
पुरुष अवाज उठी जिहिबारा । ज्ञानी वेगि जाहु संसारा ॥
काल देत जीवन कहँ त्रासा । वेगि जाहु काटहु यमफांसा ॥
ज्ञानी तत्क्षण मस्तक नाई । पहुँचे जहां धर्म अन्याई ॥
धर्मराय ज्ञानी कहँ देखा । विपरीत रूप कीन्ह तब भेखा ॥

धर्मराय वचन

सेवा बस दीप हम पाया । तुम भवसागर कैसे आया ॥
करों सँहार सही तोहि ज्ञानी । तुम तो मर्म हमार न जानी ॥

ज्ञानी वचन

ज्ञानी कहै तब सुनु अन्याई । तुम्हरे डर हम नाहिं डराई ॥
जो तुम बोलेउ वचन हँकारी । तत्क्षण तोंकहँ डारी मारी ॥

धर्मराय वचन

तबै निरंजन बिनती लाई । तुम जग जाय जीवमुक्ताई ॥
सकलो जीव लोक तुव जावे । कैसे क्षुधा सु मोरि बुझावे ॥
लक्षजीव हमनिशि दिन खाया । सवालक्ष नितप्रति उपजाया ॥
पुरूष मोहिं दीन्ही रजधानी । तैसे तुमहू दीजे ज्ञानी ॥
जगमें जाय हंसा तुम लावहु । काल जालते तिन्हें छुडावहु ॥
तीनों युग जिव थोरा गयऊ । कलियुगमें तुम माड मडयऊ ॥
अब तुम आपन पंथ चलैहो । जीवन लै सतलोक पठैहो ॥
इतना कही निरंजन बोला । तुमते नहीं मोर बस डोला ॥
और बन्धु जो आवत कोई । छिनमहँ ताकहँ खात बिगोई ॥
मैं कहौं तो मनिहो नाहीं । तुम तो जान जगतके माहीं ॥
हमहूँ करब उपाय तहांहीं । शब्द तुम्हार माने कोइ नाहीं ॥
करम भरमें अस करूँ ठाटा । जाते कोइ न पावे बाटा ॥
घर घर भूत भरम उपजायब । धोखा देइ देइ जीवभुलायब ॥
मद्य मांस भक्षै नर लोई । सर्व मांस मद नर प्रिय होई ॥
तुम्हरी कठिन भक्ति है भाई । कोई न मनिहैं कहौ बुझाई ॥
ताहीते मैं कहौं तुम पाहीं । अब जनि जाहु जगतके मांहीं ॥

कबीर वचन

तेहिं क्षण कालसन हम भाखा । छलबल तुम्हरो जानि हम राखा ॥

छन्द

देउँ सत्य शब्द दिढाय, हंसहि भरम तेरो टारऊँ ॥
लक्ष बल तुम्हार सब चिन्हायडारूँ, नामबलजिवतारऊँ ॥

मन कर्म बानी मोहि सुमिरे, एक तत्व लौंलाइहै॥
सीस तुम्हरे पांव दै जिव, अमरलोक सिधाइहै७८॥
सोरठा—मरदे तुम्हरे मान, सूरा हंस सुजान कोई ॥
सत्यशब्द परमान, चीन्हे हंसहि हर्ष अति ॥८२॥
इतना सुनत काल जब हारा । छलमत्ता तब करन विचारा ॥

धर्मराय वचन

कहै धरम अंश सुखदायी । बात एक मुहिं कहौ बुझायी॥
यहियुग कौन नाम तुम्ह कोई । तौन नाम मुहि भाखो सोई ॥

कबीर वचन

नाम कबीर हमार कलिमाहीं । कबीर कहत जम निकट न आहीं॥

धर्मराय वचन

इतना सुनत बोला अन्याई । सुनौ कबीर मैं कहौं बुझाई ॥
तुम्हरो नाम लै पंथ चलायब। यहिविधिजीवनधोखलखायब॥
द्वादश पंथ करब हम साजा । नाम तुम्हारे करब अवाजा ॥
मृतु अन्धा है हमारो अंशा । सुकृतके घर होवे वंशा ॥
मृतु अन्ध तुम्हरे गृह जैहैं । नाम नरायन नाम धरै हैं ॥
प्रथम अंश हमारा जाई । पीछे अंश तुम्हारा भाई ॥
इतनी विनती मानो मोरी । बार बार मैं करौं निहोरी ॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

तब हम कहा सुनो धर्मराया । जीवन काज फंद तुम लाया॥
ताकहँ वचन हार हम दीन्हा । पीछे जगहिं पयाना कीन्हा ॥
सो मृतु अन्धा तुम घर आवा। भयउ नरायन नाम धरावा॥
काल अंश तो आहि नरायन । जीवन फंदा काल लगायन॥

छन्द

हम नाम पथ प्रकाश करि हैं, जीव धोखा लावई॥

भूत भेद न जीव पावे, जीव नरकहिं नावई ॥
जिमिनाद गावत पारधीवश,नादमृग कहँ कीन्हेऊ॥
नाद सुनि ढिग मृग आयो जब,चोटतापर दीन्हेऊ॥७९॥
सो०—तस यम फन्द लगाय, चेतनहारा चेति हैं ॥
वचन वंश जिन पाय,ते पहुँचेसतलोक कहँ८३॥

द्वादश पंथका वर्णन

धर्मदास वचन

द्वादश पन्थ कालसों हारा । सो साहिब मोहि कहो विचारा॥
कौन पंथकी कैसी रीती । कहिये सतगुरु होय प्रतीती॥
हम अजान कछु मर्म न जाना। तुम साहिब सतपुरुष समाना ॥
मो किंकर पर कीजे दाया । उठि धर्मदास गहे दोइ पाया ॥

कबीर वचन

धर्मनि बूझहु प्रगट संदेशा । मेटहुँ तोर सकल भ्रम वेषा॥
द्वादश पंथ नाम समाऊँ ।चाल भेद सब तोहिं लखाऊँ॥
जस कछु होय चाल व्यवहारा। धर्मदास मैं कहों पुकारा ॥
तोरे जिवका धोक मिटाऊँ। चित संशय सब दूर बहाऊँ॥

मृत्युअन्धा दूतका पन्थ १

प्रथम पन्थका भाखौ लेखा। धर्मदास चित करो विवेका॥
मृतु अन्धा इक दूत अपारा। तुम्हरे गृह लीन्हों अवतारा॥
जीवन काज होय दुखदाई। बार बार मैं कहों चिताई ॥

तिमिर दूतका पन्थ २

दूजा तिमिर दूत चल आवे। जात अहीरा नफर कहावे ॥
बहुतक ग्रन्थ तुम्हारा चुरैहैं। आपन पन्थ नियार चलैहैं॥

अन्ध अचेत दूतका पन्थ ३

पन्थ तीसरे तोहि बताऊँ। अन्ध अचेत सो दूत लखाऊँ॥

होय खवास आय तुम पासा। सुरत गुपाल नाम परकासा॥
अपनो पन्थ चलावे न्यारा। अक्षर योगजीव भ्रम डारा॥

मनभगदूतका पन्थ ४

चौथा पन्थ सुनो धर्मदासा। मनभंग दूत करै परकासा॥
कथा मूल ले पंथ चलावे। मूपन्थ कहि जगमहिं आवे॥
लूदी नाम जीव समुझाई। यही नाम पारस ठहराई॥
झंग शब्द सुमरिन मुख भाखे। सकल जीव थाका गहि राखे॥

ज्ञानभङ्गीदूतका पन्थ ५

पंथ पांचों सुनो धर्मनि ज्ञान भंगी दूत जो॥
पंथ तिहि टकसार है सुर साधु आगम भाख जो॥
जीभनेत्र ललाटके सब रेखा जिवके परखावई॥
तिल मसा परिचय देखिके तब जीवधोखलगवावई॥८०॥
सो०जस जिहि काम लगाय,तस तिहि पान खवाइ हैं॥
नारी नर बधाय, चहुँ दिश आपुन फरि हैं॥८४॥

मनमकरंद दूतका पन्थ ६

छठे पन्थ कमाली नाऊ। मनमकरन्द दूत जग आऊ॥
मुरदा माहिं कीन्ह तिहिं बासा। हम सुत होय कीन परकासा॥
जीवहिझिलमिलज्योतिदृढ़ाई।यहि विधि बहुत जीव भरमाई॥
जौं लगि दृष्टि जीवकर होई। तौं लगिमिलझिल देखो सोई॥
दोनों दृष्टि नाहिं जिन देखा। कैसे झिल झिल रूप परेखा॥
झिलमिल रूप कालकरमानो। हिरदे सत्य ताहि जनि जानो॥

चितभंग दूतका पन्थ ७

साते दूत आहि चित भंगा। नाना रूप बोल मन रंगा॥
दौन नाम कह पन्थ चलावे। बोलनहार पुरुष ठहरावे॥

पांच तत्त्व गुण तीन बतावे । यहि विधि ऐसा पंथ चलावे ॥
बोलत वचन ब्रह्म है आपा । गुरुवसिष्ठ राम किमि थापा ॥
कृष्ण कीन्ह गुरु की सेवकाई। ऋषि मुनि और गने को भाई ॥
नारद गुरु कह दोष लगावा । ताते नरकवास भुगतावा ॥
बीजक ज्ञान दूत जो थापे । जस गूलर कीडा घट व्यापे ॥
आपा थापी भला न होई । आपा थापि गये जिव रोई ॥

अकिलभंग दूतका पन्थ ८

अब मैं आठवें पन्थ बताऊँ । अकिल भंग दूत समुझाऊँ ॥
परमधाम कहि पंथ चलावे । कछु कुरान कछु वेद चुरावे ॥
कछु कछु निरगुण हमरो लीन्हा। तारतम्य पोथी इक कीन्हा ॥
राह चलावे ब्रह्मका ज्ञाना । करमी जीव बहुत लपटाना ॥

विशम्भर दूतका पन्थ ९

नववें पंथ सुनो धर्मदासा । दूत विशम्भर केर तमासा ॥
राम कबीर पंथ कर नाऊ । निरगुण सरगुण एक मिलाऊ ॥
पाप पुन्य कहँ जाने एका । ऐसे दूत बतावे टेका ॥

नकटानैनदूतका पन्थ १०

अब मैं दशवां पंथ बताऊँ । नकटा नैन दूत कर नाऊँ ॥
मतनामी कह पन्थ चलावै । चार वरण जिव एक मिलावै ॥
ब्राह्मण और क्षत्री परभाऊँ । वैश्य शूद्र सब एक मिलाऊँ ॥
सतगुरु शब्द न चीन्हें भाई । बांधे टेक नरक जिव जाई ॥
काया कथनी कहि समुझावे । सत्य पुरुष की राह न पावे ॥

छन्द

सुनहु धर्मनि काल बाजी, करहि बड़ फन्दावली ॥
अनेक जीवन लइ गरास, कालकर्म कर्मावली ॥
जो जीव परखे शब्द मम, सो निसतरें जमजालते ॥
गहेनाम प्रताप अविचल, जाय लोक अमानते ॥ ८१ ॥

सो०-पुरुषशब्द है सार, सुमिरण अमी अमोलगुण॥
हंस होय भौ पार, मन बचकर जो दृढ गहे॥८५॥

दुरगदानी दूतका पन्थ ११

पंथ इकादश कहों विचारा। दुरगदानि जो दूत अपारा॥
जीव पंथ कहि नाम चलावे। काया थाप राह समुझावे॥
काया कथनी जीव बतायी। भरमे जीव पार नहिं पायी॥
जो जिव होय बहुत अभिमानी। सुनके ज्ञान प्रेम अतिठानी॥

हंसमुनि दूतका पन्थ १२

अब कहुँ द्वादश पंथ प्रकाशा। दूत हंसमुनि करे तमाशा॥
वचन बंस घर सेवक होई। प्रथम करे सेवा बहु तोई॥
पाछे अपनो मत प्रगटावे। बहुतक जीव फंद फँदावे॥
अंश बंस का करे विरोधा। कछु अमान कछु मान प्रबोधा॥
यहि विधि यम बाजी लावे। बारह पंथ निज अंश प्रगटावे॥
फिरि फिरि आवे फिरि फिरि जाई। बार बार जगमें प्रगटाई॥
जहां जहां प्रगटे यमदूता। जीवनसे कह ज्ञान बहूता॥
नाम कबीर धरावे आपा। कथित ज्ञान काया तहँ थापा॥
जब जब जनम धरे संसारा। प्रगट होयकै पन्थ पसारा॥
करामात जीवन बतलावे। जिव भरमाय नरक महँ नावे॥

छन्द

असकालपरबल सुनहु धर्मनि करे छलमति आयके॥
मम वचन दीपक दृढगहे, मैं लेहुँ ताहि बचायके॥
अंश हंसन तुम चितायउ, सत्य शब्दहिं दानते॥
शब्द परखे यमहि चीन्हे, हृदय दृढ गुरुज्ञानते॥८२॥
सो०-चितचेतो धर्मदास, यमराजा असछल करे॥

गहे नाम विश्वास, ताकहुँ यम न पावई हिं॥८६॥

धर्मदास वचन

हे प्रभु तुम जीवनके मूला। मेटहु मोर सकल दुख शूला॥
आहि नरायन पुत्र हमारा। अब हम तहँकर दीन्ह निकारा॥
काल अंश गृह जन्मो आई। जीवन काज भयो दुखदाई॥
धन सतगुरु तुम मोहि लखावा। काल अंशको भाव चिन्हावा॥
पुत्र नरायन त्यागि हम दीन्हा। तुमरो वचन मानि हम लीना॥

धर्मदास साहबको नौतम अन्शका दर्शन होना

धर्मदास विनवै सिर नाई। साहिब कहो जीव सुखदाई॥
किहि विधि जीव तरै भौसागर। कहिये मोहि हंसपति आगर॥
कैसे पन्थ करौं परकासा। कैसे हंसहिं लोक निवासा॥
दास नरायन सुत जो रहिया। काल जान ताकँह परिहरिया॥
अब साहिब देहु राह बताई। कैसे हंसा लोक समाई॥
कैसे बंस हमारो चलि है। कैसे तुम्हरो पंथ अनुसरि है॥
आगे जेहिते पंथ चलाई। ताते करों विनती प्रभुताई॥

कबीर वचन

धर्मदास सुनु शब्द सिखापन। कहों संदेश जानि हित आपन॥
नौतम सुरति पुरुषके अंशा। तुव गृह प्रगट होइहै वंशा॥
वचन वंश जग प्रगटे आई। नाम चुणामणि ताहि कहाई॥
पुरुष अंशके नौतम वंशा। काल फन्द काटे जिव संशा॥

छन्द

कलि यह नाम प्रताप धर्मनि, हंस छूटे कालसो॥
सत्तनाम मन बिच दृढ़गहे, सोन्स्तिरे यमजालसो॥
यम तासु निकट न आवई, जेहि बंशकी परतीतिहो॥
कलिकालके सिर पांवदैं, चलैभवजलजीतिहो॥८३॥

सो०–तुमसों कहौं पुकार, धर्मदास चित परखहू ॥
तेहि जिव लेउँ उबार वचन जो वंश दृढगहे ॥८७॥

धर्मदास वचन

हे प्रभु विनय करों कर जोरी । कहत वचन जिव त्रासै मोरी ॥
वचन वंश पुरुषके अंशा । पावउँ दर्श मिटे जिव संशा ॥
इतनी विनय मान प्रभु लीजे । हे साहिब यह दाया कीजे ॥
तब हम जानहिं सतकी रीती । वचन तुम्हार होय परतीती ॥

कबीरवचन मुक्तामणि प्रति

सुन साहिब अस वचन उचारा । मुक्तामणि तुम अंश हमारा ॥
अति अधीन सुकृत हठलायी । तिनकहँ दर्शन देहु तुम आयी ॥
तब मुक्तामणि क्षण इक आये । धर्मदास तब दर्शन पाये ॥

धर्मदासवचन

गहिके चरण परे धर्मदासा । अब हमरे चित पूजी आसा ॥
बारम्बार चरण चितलाया । भले पुरुष तुम दर्श दिखलाया ॥
दर्श पाय चित भयो अनंदा । जिमि चकोर पाये निशिचंदा ॥
अब प्रभु दाया करो तुम ज्ञानी । वचन वंश प्रकटे जगजानी ॥
आगे जेहिते पंथ चलाई । तेहिते करौं विनती प्रभुताई ॥

कबीरवचन । चूडामणिकी उत्पत्तिकी कथा

कहैं कबीर सुनौ धर्मदासा । दशै मास प्रगटे जिव कासा ॥
तुम गृह आय लेहि अवतारा । हंसन काज देह जगधारा ॥
धर्मदास सुनु शब्द सिखापन । कहो सँदेश जान हित आपन ॥
वस्तु भंडार दीन तुम पांहीं । सौंपहु वस्तु वतावहु ताहीं ॥
अब जो होह हैं पुत्र तुम्हारा । सोतो होइ हैं अंश हमारा ॥

धर्मदास वचन

धर्मदास अस विनती लायी । हे प्रभु मोकहँ कहु समुझाई ॥
हे पुरुष हम इन्द्री वशकीन्हा । कैसे अंश जन्म जग लीन्हा ॥

कबीर वचन

तब आयसु साहब अस भाखे। सुरति निरति करि आज्ञा राखे॥
पारस नाम धर्मनि लिखि देहू। जाते अंश जन्म सो लेहू॥
लखहु सैन मैं देऊँ लखाई। धर्मदास सुनियो चितलाई॥
लिखो पान पुरुष सहिदाना। आमिन देहु पान परवाना॥

धर्मदास वचन

तब गयउ धर्मदास कह शंका। दृष्टि समीप कीन्हा परसंगा॥
धर्मदास आमिन हँकरावा। लाय खसमके चरन परावा॥
पारस नाम पान लिख दीन्हा। गरभवास आसा सो लीन्हा॥
रतिसुरति सो गरम जो भयऊ। चूरामनिदासबास तहँ लयऊ॥
धर्मदास परवाना दीन्हा। आमिन आय दंडवत कीन्हा॥
दसों मास पूजी जब आसा। प्रगटे अंश चूरामणि दासा॥
कहिये अगहन मास बखानी। शुक्ल पक्ष सातमदिन जानी॥
मुकतायन परगटि जब आये। द्रव्य दान औ भवन लुटाये॥
धन्य भाग मोरे गृह आये। धर्मदास गहि टेके पाये॥

कबीर वचन

जाना कबीर मुकतायन आये। धर्मदास गृह तुरत सिधाये॥
अहै मुक्तकेर अक्षर मुक्तायन। जीवनकाज देहधर आयन॥
अजर छाय अब प्रगटे आये। यम सो जीव लेहु मुक्ताये॥
जीवन केर भयो निस्तारा। मुक्तामनि आये संसारा॥

ब्यालीसवंशके राज्यकी स्थापना

कछुक दिवस जब गये बितायी। तब साहिब इक वचनसुनायी॥
धर्मदास लो साज मँगाई। चौका जुगत करब हम भाई॥
थापन वंश बयालिस राजू। जाते होय जीवकी काजू॥
धर्मदास सब साज मँगाई। ज्ञानी आगे आन धराई॥

धर्मदास वचन

और साज चाहो जो ज्ञानी । सो साहिब मोहि कहो बखानी ॥

कबीर वचन

साहिब चौका जुगमत मडावा । जो चाहिये सो तुरत मँगावा ॥
बहुत भांतिसों चौक पुरायी । चूरामणि कहँ ले बैठायी ॥
पुरुष वचन जगमहँ आये । तेहि विधि जीव लेहु मुक्ताये ॥
वंश बयालिस दीन्हा राजू । तुमते होय जीव कहँ काजू ॥

चूडामणिको कबीरसाहबका उपदेश देना

तुमते वंश बयालिस होई । सकल जीव कहँ तारैं सोई ॥
तिनसो साठ होइ हैं शाखा । तिन शाखनते होइ हैं पर शाखा ॥
दश सहस्र परशाख तुव ह्वै हैं । वंशन साथ सबै निरवहि हैं ॥
नाता जान करे अधिकाई । ताकहँ लोक बदों नहिं भाई ॥
जस तुम्हार हुइ है कडिहारा । तैसे जानो साख तुम्हारा ॥

छन्द

पुरुष अंश नहिं दूसरे तुम, सुनहु सुवंश नागरा ॥
अंश नौतम पुरुषके तुम, प्रगट मैं भौसागरा ॥
वेद जीवन कहँ विकल तब, पुरुष तोहि पठायऊ ॥
हंश दूजो कहै तेहि, जीव यम लै खायऊ ॥८४॥
सोरठा–वंश पुरुषके रूप, ज्ञान जौहरी परखि हैं ॥
होवे हंस स्वरूप, वंश छाप जो पाइ है ॥८८॥

कबीर वचन धर्मदासप्रति

सतगुरु कहै धर्मनि सुनि लेहू । अब भंडार सौंपि तुम देहू ॥
प्रथम तुमहि जो सौंपा भाई । सबहिं सबहि तुम देहु लखाई ॥
तब चूडामणि होवैं पूरा । देखत काल होय चकचूरा ॥
आज्ञा सुनत उठे धर्मदासा । चूरामणि हँकराये निजपासा ॥

वस्तु लखाय तेहि छन दीन्हा। तनिको विलंबन तामहँ कीन्हा॥
दोउ आय पुनि गुरुपद परसे। कांपन लग्यो काल तब डरसे॥
सतगुरु भयेहुलास मनमाहीं। देखि चुरामणि अतिहरषाहीं॥
बहुरि धर्मनि सन भाषन लागे। सुनहु सुकृत तुम बहुत सुभागे॥
वंश तोर भये जग कडिहारा। जग ज़ीवन होइ हैं भवपारा॥
इतने होइ हैं ब्यालिस बंसा। प्रथमै प्रकटै सोई मम अंसा॥
वचन वंश मम सोइ कहावै। बहुरि होय सों विंदजग आवै॥

वंशका माहात्म्य

वंश हाथ परवाना पइ हैं। सो जिव निभरयलोक सिधैहैं॥
ता कहँ यम नहिं रोके वाटा। कोट अठासी ढूँढ़े घाटा॥
कोटज्ञान भाखे मुख बाता। नाम कबीर जपे दिनराता॥
बहुतक ज्ञान कथे असरारा। वंश बिना सब झूठ पसारा॥
जो ज्ञानी करी है बकवादा। तासों बूझहु व्यंजन स्वादा॥
कोट यतनसों बिंजन करई। साम्हर बिन फीका सब रहई॥
जिमिबिंजनतिमि ज्ञानबखाना। वंस छाप सतरस समजाना॥
चौदह कोटि है ज्ञान हमारा। इतने सार शब्द है न्यारा॥
नौ लख उडुगन उगें अकाशा। ताहि देख सब होत हुलासा॥
होवे दिवस भानु उगि आवे। तब उडुगनकी ज्योति छिपावे॥
नौलख तारा कोटि गियाना। सार शब्द देखहु जस भाना॥
कोटि ज्ञान जीवन समुझावे। वंश छाप हंसा घर जावे॥
उदधि मांझ जस चलैं जहाजा। ताकर और सुनो सब साजा॥
जस वोहित तस शब्द हमारा। जस यरिया तस वंश तुमारा॥

छन्द

बहु भांतिधर्मनि कहों तुमसों, पुरुष मूल बखानिहो॥
वंशसों दूजो करे जोइ, सो जाय यमपुर थानहो॥

वंश छाप न पाव जो शिव, शब्द निशिदिन गावई ॥
काल फन्दमें फँद तेहि, मोहि दोष न लावई ॥ ८५ ॥
सो०—सजे कागकी चाल, परखि शब्दसो हंसहो ॥
ताहि न पावै काल, सार शब्द जो दृढ गहे ॥८९॥

भविष्यकथा प्रारम्भ । धर्मदास वचन

धर्मदास विनती अनुसारी । हे प्रभु मैं तुम्हरी बलिहारी ॥
जीवन काज वंश जग आवा । सो साहिब सब मोहिं सुनावा ॥
वचन वंश चीन्हे जो ज्ञानी । ता कह नहिं रोके दुर्ग दानी ॥
पुरुष रूप हम वंशहि जाना । दूजा भाव न हृदये आना ॥
नौतम अंश परगट जग आये । सो मैं देखा ठोक बजाये ॥
तबहू मोहि संशय एक आवे । करहु कृपा जाते मिट जावे ॥
हमकहँ समरथ दीन पठायी । आये जग तब कालफसायी ॥
तुम तो कहो मोहि सुकृत अंसा । तबहूँ काल कराल मुहिडंसा ॥
ऐसहिं जो वंशन कहँ होई । जगत जीव सब जाय बिगोई ॥
ताते करहु कृपा दुखभंजन । वंशनछले नहिं कालनिरंजन ॥
और कछू मैं जानों नाहीं । मोरलाज प्रभु तुमकहँ आहीं ॥

कबीर वचन

धर्मदास तुम नीक विचारा । यह संशय सत आदि तुम्हारा ॥
आगे अस होइहिं धर्मदासा । धर्मराय एक करै तमासा ॥
सो मैं तुमसे गोय न राखों । जस होइहिंतससतसत भाखों ॥
प्रथम सुनो आदिकी बानी । करिके ध्यान लेहु तुम जानी ॥
सतयुग पुरुष मोहीं हँकराई । आज्ञा कीन्ह जाहु जग भाई ॥
तहँते चले काल मँग भेंटा । बहु तकरार दर्प तिहि मेटा ॥
तब तिन कपट मोसन कीन्हा । तीनयुगमांगिमोहिंसनलीन्हा ॥
पुनि अस कहेसि काल अन्याई । चौथायुग नहिं मांगो भाई ॥

ऐसा वचन हार हम दीन्हा । तब संसार गमन हम कीन्हा ॥
युग तीनों हार तिहि हम दीन्हा । ताते पंथ प्रगट नहिं कीन्हा ॥
चौथा युग जब कलियुग आयो । बहुरि पुरुष मुहि जगत पठायो ॥
मगमहँ रोक्यो काल कसाई । बहुत विधि सों करी बरियाई ॥
सो कथा हम प्रथम जनाई । बारह पन्थको भेद बताई ॥
कपट करचो बारह बतलायो । औरो बात न मोहि जनायो ॥
तीनि युगन मोहि दीन हिरायी । कलियुगमां बहुफन्द मचायी ॥
बारह पथ प्रगट मोहि भाखा । चार पन्थ सो गुप्तहिं राखा ॥
जब मैं चार गुरू निरमाया । कालहु आपन अंश पठाया ॥
जब हम कीन्हा चार कडिहारा । धर्मराय छलबुधि विस्तारा ॥
पुरुष हम सन कीन परकासा । जानि परमारथ कहों धर्मदासा ॥
यह चरित्र सोइ बुझि है भाई । जासु हृदय निज नाम सहाई ॥

निरंजनका अपने चार अंशको पंथ चलानेकी आज्ञा देनेकी कथा

चारहि अंश निरञ्जन कीन्हा । तिनकहुँ बहुत सिखापन दीन्हा ॥

निरंजन वचन

तिनते कह्यो सुनहु हो अंशा । तुम तो आहु मोर निज बंसा ॥
तुमसे कहों मानि सो लीजै । आज्ञा मोर सो पालन कीजै ॥
वैरी हमार अहै एक भाई । नाम कबीर जगमाहिं कहाई ॥
भवसागर मेटन सो चाहै । औरलोक सो बसावत आहै ॥
करि छल कपट जगत भरमावै । मोर राहते सबहिं छुटावै ॥
सत्य नाम कर टेर सुनाई । जीवन कहँ सो लोक पठाई ॥
जगत उजारन सो मन दीन्हा । ताते तुमहिं हम उत्पन्न कीन्हा ॥
आज्ञा मानि जगत महँ जाहू । नाम कबीर पंथ प्रगटाहू ॥
जगत जीव विषया रस माते । मैं जो कहहुँ करहु सोइ घाते ॥
पंथ चार तुम जग निरमाओ । आपन आपन राह बताओ ॥

नाम कबीर चारों धरि राखो। विना कबीर न वचनमुख भाखो॥
नाम कबीर जब जिव आवैं। कहहु वचन तिनके मन भावैं॥
कलियुग जीव ज्ञानसुधि नाहीं। देखा देखी राह चलाहीं॥
सुनत वचन तुम्हरो हरषावैं। बार बार तुम्हरे ढिग आवैं॥
जब सरधा तिनकी दृढ होई। भेद भावना मनि हैं कोई॥
तिन पर जाल आपनो डारो। भेद न पावैं देखि सम्हारो॥
जम्बुदीप महँ करिहो थाना। नाम कबीर जहाँ परमाना॥
जब कबीर बांधो गढ़ जावे। धर्मदास कहँ निज अपनावे॥
ब्यालिस वंश तब थापै राजू। तबही सोवे राज विराजू॥
चौदह यमते नाका रोका। बारह पन्थ हम लाया धोका॥
तबहूँ हम कहँ संशय भाई। ताते तुम कहँ देत पठाई॥
ब्यालिसपर तुम करिहो घाता। तिनहिं फँसावहु अपनी बाता॥
तबहीं तो हम जानब भाई। वचन मोर तुम लियहु उठाई॥

चारों दूत वचन

सुनत वचन हरषे तब दूता। आज्ञा मान लीन्ह तुव बूता॥
जैसी आज्ञा तुव मोहि दीन्हा। मानि वचन हमसिरपर लीन्हा॥
हाथ जोर विनवन लागे। तुम किरपा हम होब सुभागे॥

कबीरवचन धर्मदासप्रति

इतना सुनत काल हरखाना। अतिही सुख दूतनते जाना॥
औरहु तिनको बहुत बुझावा। काल अन्याई राह बतावा॥
जीव घात बहुत मन्त्र सुनाई। तिनकहँ कहे जाहु जगभाई॥
चारहु चार भाव धनि जाहू। ऊंच नीच छांडहु जनिकाहू॥
अस करि फानफनहु तुम भाई। जेहिकरि मोर अहार न जाई॥
सुनत वचन तिन मन अति हरषे। काल वचन जिमि अमृत वरषे॥
यही चार दूत जग प्रगटे हैं। चार नामते पंथ चले हैं॥

चार दूत कहँ नायक जानो । बारह पन्थकर अगुवा मानो॥
इन्हहीं चार जो पंथ चलैं हैं । उलट पुलट तिनहू अरथै हैं॥
चार पंथ बारह कर मूला । वचन वंश कहँ होइ हैं शूला॥
सुनत वचन धर्मनि घबराने । हाथ जोर विनती तिन ठाने॥

धर्मदास वचन

कह धर्मदास सुनो प्रभु मोरा । अब तो संशय भयो बरजोरा॥
अब तो विलम्ब न कीजे साई । प्रथम बतावहु तिनकर नाईं ॥
जीवन काज मैं पूछौं तोही । तिनकर चरित्र सुनावहु मोही॥
तिन दूतन कर भेष बताओ । कहो चिह्न ताको परभाओ॥
कौन रूप तिन जगमें धारैं । केहि विधिते सो जीवन पारैं॥
कौन देश परगटि हैं आई । हे साहिब मुनि देहु बताई ॥

कबीर वचन

धर्मदास मैं तोहि लखाओं । चारि दूतकर भेद बताओं ॥

चार दूतोंके वर्णन

तिनकर नाम प्रथम सुनि लीजे। रंभ कुरंभ जयविजय भनीजे॥

१ रंभ दूतका वर्णन

रंभ दूत कर करौं बखाना । गढ कालिंजर रोपिहै थाना॥
भगवान भगत वहि नाम धराई । बहुतक जीव लेई अपनाई ॥
जो जियरा होइहिं अंकूरी । सो बांचहि यम फन्दा तूरी॥
रंभ जोरावर यम बड़ द्रोही । तुमहि खंडि अरूखंडि हि मोही॥
आरती नरियर चौका संहारी । खंडिहि लोकदीप सबझारी ॥
ज्ञान ग्रन्थ औ खंडिहिं बीरा । कथहिं रमैनी काल गभीरा ॥
मोर वचन लेइ करे तकरारा । तेही फांस फँसे बहुसारा ॥
चारों धार कथे असरारा । हमार नाम ले करे पसारा ॥
आपहि आप कबीर कहाई । पांचतत्त्व बसि मोहि ठहराई॥
थापिहिं जीव पुरुष समभाई । खंडिहिं पुरुष जीव वर लाई॥

हंस कबीर इष्ट ठहराई । करता कहँ कबीर गुहराई ॥
कर्ता काल जीवन दुखदाई । तेहि सरीख मोहि यह यमराई॥
कर्मी जीवहि पुरुष ठहराई । पुरुष गोइहिं आपु प्रगटाई ॥
जो यह जीव आपुहिं होई । नाना दुख कस भुगुते सोई॥
पांच तत्त्ववसि जीव दुख जावे । जीव पुरुष कहँ सम ठहरावे॥
अजर अमर पूरुषकी काया । कला अनेक रूप नहिं छाया॥
अस यमदूत खण्ड देइ ताही । थापे जीव पुरुष यह आही॥
तिस सागर झाई निज देखी । धोखा गहै निअच्छर लेखी॥
बिनु दर्पण दरसे निज रूपा । धर्मनि यह गुरुगम्य अनूपा॥

छन्द

यहि विधिरम्भअपबलसुनिधर्मनि,करइ छलमत आइकै॥
बहु जीवहि फाँस फँसबिहिजग,नामकबीरहि गाइके॥
अंश वंशहि चेताइ हौं तुम, शब्दके सहिदानते ॥
परखिममशब्दहियमाहिचीन्हे, रहेगुरुगमज्ञानतै ८९
सो०चित चेतो धर्मदास, यमराजा अस छल करे॥
गहि शब्द विश्वास, हंसन शब्द चिताइहौं९०॥

२ कुरम्भ दूतका वर्णन

रम्भकथा तोहि कहि समुझावा। अब कुरम्भके बरनूँ भावा ॥
मगध देशमें परगटि है जाई । धनीदास वहि नाम धराई ॥
ज्ञानी जीवन कहँ भटकावे । कुम्भदूत बहुजाल खिडावे ॥
जाको छुद्र ज्ञान घट होई । धोक दे यम ताहि बिगोई ॥

धर्मराय वचन

हे साहब मोहि कहौ बुझाई । कौन ज्ञान वह कथि है आई॥

कबीर वचन

धर्मनि सुनो कुरम्भकी बाजी । कथी टकसार फन्द दृढसाजी ॥
चन्द्र सूर तत लगन पसारा । राहु केतु कथि है असरारा ॥
पांच तत्त्व मतिसार बखानी । जीव अचेत भर्म नहिं जानी ॥
ज्योतिष मत टकसार पसरि हैं । ग्रह गोचर वश प्रभु बिसरैहैं ॥
नीर पवन कहँ कथि हैं ज्ञाना । पवन पवनके नाम बखाना ॥
आरति चौका बहु अरथै हैं । धोका दे जीवन भरमै हैं ॥
शिष जब करिहै करिहिं विशेषा । अंग अंगकी निरचै रेखा ॥
नखसिख सकल निरखिहै भाई । करम जाद जीवन भरमाई ॥
निरखि परखि जित्र सूर चढाई । सूर चढाय जीव धरि खाई ॥
कनक कामिनि दछिना अरपाई । यह विधि जीव ठगौरी लाई ॥
गांठ बांधि फेरहिं तब फेरा । करम लगाय करिहि यम चेरा ॥
पवन पचासी कालकी आहीं । पवन नाम लिखि पान खवाहीं ॥
नीर पवन कथि करै पसारा । पवन नाम गहि आरति तोरा ॥
पवन पचासी करि अनुहारी । आरति चौका करै विचारी ॥
क्या नारी क्या पुरुष दे भाई । तिल मासा निरखे सब ठाई ॥
शंख चक्र औ सीपकर देखि हैं । नख सिख रेखा सबै परखिहैं ॥
ऐसो काल दुष्ट मति भाई । जीवन कहँ संशय उपजाई ॥
संशय लगाय गरसि है काला । करहि जीवको बहुत बिहाला ॥
औरहु सुनहु काल व्यवहारा । जस कछु कथिहै काल लबारा ॥
साठ समैं बाहर चौपाई । देहि उठाय भरम उपजाई ॥
पंच अमी एकोत्तर नामा । सुमिरन सार शब्दगुण धामा ॥
जीव काज बदि जो कछु राखा । तामें काल धोखा अभिलाखा ॥
पांचो तत्त्व केर उपचारा । कथि हैं यही मता है सारा ॥
पांचो तत्त्व परकीर्ति पचीसा । तीनों गुण चौदह यम ईशा ॥

यहि फन्दे जिव फन्दैं भाई । पांच तत्त्व यम जाल बनाई॥
तृन धरि सुरति तत्त्वमो लावे । तन छूटे कहुँ कहां समावे ॥
जहँ आशा तहँ बासा पावे । तत्त्व मतो गहि तत्त्व समावे॥
नाम ध्यान सो देह छुड़ाई । राखे तत्त्व फांस अरु बाई ॥
धर्मनि कहँ लगि कहौं बखानी । दूत कुरम्भ करिहै घमसानी ॥
ताकी छलमति चीन्हे सोई । जो जिव मोहि लखिहै समोई॥
पांचों तत्त्व कालके अंगा । ताके मते जीव होय भंगा ॥

छन्द

सुनेउ धर्मनि कुरम्भबाजी, करि बहु फंद फँसावई॥
अनन्त जीवन गरासि लेवे, तत्त्व मता फैलावई ॥
लेइ नाम कबीर जग महँ, पंथ वहि परगट करे ॥
भ्रमवंश जिवे जाय तेहि ढिग,कालके मुखमें परै॥८७

सो०–पुरुषशब्द है सार,सुमिरन अमी अमोल गुण॥
सो हंस हो भवपार,मन वच कर्म जो दृढ गहे॥९१॥

३ यमदूतका वर्णन

रंभ कुरम्भ यह कह्यो बखानी । अब परखहु तुम जयकी बानी॥
यह यमदूत कठिन विकरारा । मूलमूल वइ कथिहि लबारा॥
ग्राम कुरकुट प्रगटे आई । गढ़ बांधोंके निकट रहाई ॥
कुल चमारके प्रगटे सोई । ऊँचे कुलकी जात विगोई ॥
साहब दास कहावे दूता । गणपत होइहैं ताकर पूता ॥
दोई काल प्रबल दुखदाई । तुम्हरे बंसको घेरिहिं आई ॥
कथई मूल हमारे पासा । तुम्हें उठाय दई धर्मदासा ॥
अनुभव कहिहैं ग्रंथ बहुभाई । ज्ञानी पुरुष संवाद बनाई ॥
कथिहैं मूलन पुरुष मोहिं दीन्हा। धर्मदास निज मूल न चीन्हा ॥
अस वहि काल जोरावर होई । छेईं भरम वंशको सोई ॥

वंशहिं निज मत देह दिढ़ाई । पारल थाका भूल चढ़ाई ॥
मूल छापले वंश बिगोई । पारस देहिं काल मति सोई ॥
झंग शब्द वह कथि हैं भाई । कच्चे जीवन देइ भुलाई ॥
जाहि नीर ते काया होई । थापिहि ताकहँ निजमति सोई ॥
काया मूल बीज है कामा । राखिहि ताकहँ गुप्तहिं नामा ॥
प्रथमहिं थाका गुप्तहिं राखी । सिषहिं साधि संधी तब भाखी ॥
प्रथमहिं ज्ञान ग्रंथ समुझायी । तेहि पीछे फिर काल दिढ़ायी ॥
नारि अंग कहँ पारस देहैं । आज्ञा मांगि शिष्य पहँ लइहैं ॥
प्रथमहिं ज्ञान शब्द समुझैहैं । तेहि पीछे फिर मूल पिलैहैं ॥
नरकखानि तेहि मूल बखानी । यमबंका असछल मतिठानी ॥
झँझरी दीप कथा अरथाई । झंग नाम लै ध्यान धराई ॥
अनहद बाजे जमको थाना । पांच तत्त्व करिहै घमसाना ॥
पांचों तत्त्व गुफामें जाई । नाना रंग करे तहँ भाई ॥
पांचों तत्त्व करै उजियारी । ऊठे झंग गुफामें भारी ॥
जब सोहंगम जीव तन छाँडे । तब कहौं झंगकवनविधि मांडे ॥
झंझरी दीप काल रचि राखा । झंग हंग दोउ कालकि शाखा ॥
अथि है अविहरकल अन्याई । अविहरधोख धर्मकर भाई ॥
आरतिचौका कथिहि अपारा । होइहैं तैस बहुत कडिहारा ॥
काल नाम वह साजै बारा । परखो धर्मदास मतिधीरा ॥
ठाम ठाम घट कर्म करै हैं । हमरे नाम लै हमहिं हँसहैं ॥
जनिहैं जगतसबयहिसम आही । बूझहि भेद भरम तब जाही ॥
कहँ लगि कहौं कालकर लेखा । ज्ञानी होय सो करे विवेका ॥

छन्द

ममज्ञानदीपकजाहिकरसो, चीन्हि है यमराजहो ॥
तजि काल विषय जञ्जालहंसा, धाइहै निज काजहो ॥

रहनि गहनि विवेक बानी, परखिही कोइ जौहरी ॥
गहहिं सार असार परिहरि, गिराममजेहिसूधरी ८८

सो०–धर्मदासलेहुज्ञान, जम बालकको छलमतो ॥
हंसहिं कहु सहिदान, जाते यम रोकैं नहीं ॥ ९२ ॥

धर्मदास तुव बस अज्ञाना । चिन्हिहैं नहीं काल सहिदाना ॥
जब लग बंस रहौं लवलीना । तब लग काल रहै अतिदीना ॥
रहै काल ध्यान बक लाई । तजि हैं नाम काल प्रगटाई ॥
बेधि मूल बंसमो लगिहैं । तब टकसार धोकमहँ पगिहैं ॥
छेके काल बंस कहँ आई । वस्तुके धोखे काल अरुझाई ॥
हमरी चालसे बंस उठै हैं । मूल टकसारके मग अरुझैं हैं ॥
नाद पुत्र सो न्यारा रहि हैं । मम बानी नहिं वह दृढ गहि हैं ॥
रहै उजागर शब्द अधारा । रहनि गहनि गुनज्ञान विचारा ॥
ताहि न ग्रासे काल अन्याई । यह तुम जानहु निश्चय भाई ॥

४ विजय दूतका वर्णन

अब तुम सुनहु विजयको भाऊ । एक एक तोहि बरनि सुनाऊ ॥
बुन्देलखण्ड यह प्रगटे जाई । ज्ञानी जीवहि नाम धराई ॥
सखा भावको भक्ति दिढाई । रास रची औ मुरलि बजाई ॥
सखी अनेक संग लौलाई । आपहिं दूसरा कृष्ण कहाई ॥
धोका देई जीवन कहँ सोई । बिन परिचे कस जाने लोई ॥
चच्छु अग्र रह मनकी छाया । नासा उरध अकाश बताया ॥
कुहिरा परै धोखा यमकेरा । श्याम सेत चित रंग चितेरा ॥
छिन छिन चंचल अस्थिर नाहीं । चर्म दृष्टिसे देखे ताहीं ॥
मनकी छाया काल दिखावै । मुक्ति मूल छाया ठहरावै ॥
सत्य नामते देह छुड़ाई । जाते जीव कालमुख जाई ॥

धर्मनि तोहि कहा समझाई । जस चरित्र करि है जमराई॥
चारों दूत करै घन घोरा । यह विधि जीव चोरावै चोरा॥

दूतोंसे बचनेका उपाय

दीपक ज्ञान धरौ दिढ बारी । जाते काल न करै उजारी ॥
इन्द्रमती कहँ प्रथम चितावा । रही सुचेत काल नहिं पावा॥

भविष्य कथन अलग व्यवहार

जस कछु आगे होय है भाई । सो चरित्र तोहि कहौं बुझाई॥
जबलों तुम रहि हौ तनमाहीं । तौलों काल प्रगटिहैं नाहीं ॥
गहो किनार ध्यान बक लाये। जब तन तजो काल तब आये॥
छेकहिं तोर बंसको आई । काल धोकसो बंस रिझाई ॥
बहु कडिहार बंसके नादा । पारस बंस करहिं विषस्वादा॥
बिन्दहि मूल और टकसारा । होइहि खमीर बंस मँझारा ॥
बंसहि एक धोंक बड़ होइ है । हंग दूत देहिं माहिं समैहै ॥
आप हंग अधिक है ताही । आप माहिं सो झगर कराही॥
बिन्द सुभाव आहंग नहिं छोडै। मन मन आय विन्द मनमोड़ै॥
अंस मार सुपन्थ चलै है । ताहि देखि सो रार बढ़ै है ॥
ताको चिन्हि देखि नहिं सकिहै। आपन वाट बंस महँ तकिहै॥
वंस तुम्हार अनुभव कथि रखिहै। नाद पुत्रकी निन्दा भखिहै ॥
सोइ पढ़ि हैं बंश कडिहारा । ताको होइ बहुत हंकारा ॥
स्वारथ आया चीन्ह न पैहैं । अनन्त जीवन कहँ भटकैहैं॥
ताते तोहि कहौं समझाई । अपने वंशन देहुँ चिताई ॥
नाद पुत्र जो प्रकट होई । ताको मिले प्रेमसे सोई ॥
तुमहु नाद पुत्र गम आहू । यम मन परखहु धर्मनि साहू॥
कमाल पुत्र जो मृतक जियावा । ताके घटमें दूत समावा ॥

पिता जानि तिन आहँग कीन्हा। तब हम थाति तोहि कहँ दीन्हा॥
हम हैं प्रेम भगतिके साथी। चाहौं नहीं तुरी औ हाथी॥
प्रेम भक्तिसे जो मोहिं गहि हैं। सो हंस मम हृदय समै हैं॥
अहंकारते होतेउ राजी। तौ मैं थापत पंडित काजी॥
अधीन देखि थाति तेहि दीना। देखेउ जब तोहिं प्रेम अधीना॥
ताते धर्मनि मानु सिखाई। नाप थापी सौंपिहु भाई॥
नादपुत्र कहँ सौंपिहु सोई। पंथ उजागर जासों होई॥
बंस करि हैं अहंकार बहूता। हम हैं धर्मदास कुल पूता॥
जहां हंग तहवां हम नाहीं। धरमनि देखु परखि मनमाहीं॥
जहाँ हंग तहँ काल सरूपा। नहिं पावे सतलोक अनूपा॥

धर्मदास वचन

हौं प्रभु मैं तुव दास अधीना। तुव आज्ञाते होउँ न भीना॥
नादहिं थाती सौंपब स्वामी। वंश तरै मोर अन्तरयामी॥

कबीर वचन

धरमदास तुव तरि हैं वंशा। याहि बातको मेटो संशा॥
नाम भक्ति जो दिढके धरिहैं। सुनु धरमनि सोकस ना तरिहैं॥
रहनि रहै तौ सबै उबारों। वचन गहै तो ब्यालिस तारों॥
वचन गहै सोइ बंस पियारा। विना वचन नहिं उतरे पारा॥

धर्मदास वचन

बंस ब्यालिस तो तुम्हारा अंशा। ताको तार्यो कौन प्रसंसा॥
बंस अंश जो तारहु साईं। तबहीं जगमें आई बड़ाई॥

कबीर वचन

बंस ब्यालिस बिंद तुम्हारा। सो मैं एक वचनते तारा॥
और वंश लघु जेते होई। विना छाप छूटे नहिं कोई॥
बिंद मिलै तौ वंस कहावे। विना वचन नाहीं घर आवे॥
वचन बंश ब्यालिस ठेका। तिनका समरथ दीन्हों टेका॥

वंस अंस वचन एकै सोई । दीर्घ वंस अंस लघु होई ॥
जेठो अंस वचन मोर जागे । और बंस लघु पीछे लागे ॥
चाल चलै औ पंथ चलावे । भूले जीवनको समुझावे ॥
नाद बिन्द जो पंथ चलावे । चूरामणि हंसन मुक्तावे ॥
धर्मदास तुव वंस अज्ञाना । चीन्हे नहीं अंस सहिदाना ॥
जस कछु आगे होइ है भाई । सो चरित्र तोहि कहों बुझाई ॥
छेंठे पीढ़ी बिन्द तुव होई । भूलै वंश बिन्दु तुव सोई ॥
टकसारीको लै हैं पाना । अस तुव बिन्द होय अज्ञाना ॥
चाल हमार बस तुव झाडै । टकसारीके मत सब मॉडै ॥
चौका तैसे करै बनायी । बहुत जीव चौरासी जायी ॥
आपा हंस अधिक होय ताही । नाद पुत्रसे झगर कराही ॥
होवे दुरमत बंस तुम्हारा । वचन बंस रोके वटपारा ॥

धर्मदास वचन

अब तो संशय भयो अधिकाई । निश्चय वचन करहु मोहि साई ॥
प्रथमे आप वचन अस भाषा । निजरच्छामहँब्यालिसराखा ॥
अब कहहु काल वश परि हैं । दोइबातकिहि विधिनिस्तारिहैं ॥

नाद वंशकी बड़ाई कबीर वचन

धरमदास तुम चेतहु भाई । वचन बंश कहँ देहु बुझाई ॥
जब जब काल झपाटा लाई । तबै तबै हम होब सहाई ॥
नाद हंस तबहिं प्रगटायब । भरमतोहिजगभक्तिदिढायब ॥
नाद[१] पुत्र सो अंश हमारा । तिनते होय पंथ उजियारा ॥
वचन वंश तो होय सचेता । बिन्द तुम्हार न माने होता ॥
वचन वंश नाद सग चेते । मेटै काल घात सब तेते ॥
बिन्द तुम्हार न मानै ताही । आया वंश न शब्द समाही ॥

---

१ नाद अर्थात् शब्द-शब्द से ही बाला पुत्र अर्थात् शिष्य, साधू, सन्त इत्यादि

शब्दकी चास नाद कहँ होई। विन्द तुम्हारो जाय विगोई॥
विंदते होय न नाद उजागर। परखिके देखहु धर्मनि नागर॥
चारहु युग देखहु समवादा। पन्थ उजागर कीन्हों नादा॥
कहँ निरगुण कहँ सरगुन भाई। नाद विना नहिं चल पंथाई॥
धर्मनि नाद पुत्र तुम मोरा। ताते दीन्ह मुक्तिका डोरा॥
याहि विधि हम व्यालिस तारैं। जबैं गिरै वह तबै उबारैं॥
नाद वचन जो विन्द न माने। देखत जीव काल धर ताने॥
और वंस जो नाद सम्हारै। आप तरै औ जीवहिं तारै॥
कहां नाद कहं बिन्दु रै भाई। नाम भक्ति बिनुलोक न जाई॥

गुरुमहिमा

गुरुते अधिक काहु नहिं पेखै। सबते अधिक गुरु कहँ लेखै॥
सबते श्रेष्ठ गुरू कहँ मानै। गुरू सिखापन सतकै जानै॥
बिन्द तुम्हार करै असगरा। बिनु गुरु चहै होन भवपारा॥
निगुरा होइ जगत समुझावे। आप बुड़े सो जगत बुड़ावे॥
बिना गुरू नाहि निस्तारा। गुरुहिं गहै सो भवते पारा॥
नाता जानि करै अधिकाई। वंसहि काल गरासै आई॥
जब जग नात गोत अरुझावे। वचन बंश धोखा तब पावे॥
तबहिं काल गरासै आई। नाना रूप फिरै जग लाई॥
तबहिं गोहार नाद मम आवे। देखत काल तुरत भगि जावे॥
ताते धर्मनि देहु चिताई। वचन वंश बहु विधि समुझाई॥
नादवंस सँग प्रीति निबाहे। काल धोखते बचन जु चाहे॥
नाद वंशकी छोड़ै आसा। ताते विन्द जाय यमफांसा॥
बहु विधि दूत लगावै बाजी। देखैं जीव होय बहुराजी॥
ते तो जाय काल मुख परिहैं। नाद वंश जो हित नहिं धरिहैं॥
ताते तोहि कहों समझायी। सबहीं कहँ तुम देहु चितायी॥

नाद वंशकहँ जो जिव जाना । वचन वंस चीन्हे सहिदाना॥
ताकहँ यम नहिं रोके आई । सत्य शब्द जिन चीन्हा भाई ॥
धरमदास मैं कहौं बुझाई । वचन हमार गहो चितलाई ॥
जीवन कहँ तुम कहिहो जाई । वचन वंस जब तारन भाई ॥
वचन वंस वहि नाद न छांडै । सदा प्रीति नाद संगमांडै ॥
नात गोत कहँ पच्छ न करई । पच्छ करै तो दुखमहँ परई ॥
बहुत विधी मैं दीन्ह चिताई । चेत करै दुःख नहिं पाई ॥
बिन्द तुम्हार नाद सँग जावै । देखत दूत मनहिं पछतावै ॥
यहि उपाय सुख होय बहूता । वचन नाद विंद लगे न दूता॥

धर्मदास वचन

धर्मदास उठि विनती लाये । अब प्रभु मोही कहहु बुझाये॥
नाद महातम ऐसो राखा । वचन वंस अधीन करि भाखा॥
कारन कौन कहहु मोहि साई । वचन वंस काहे निरमाई ॥
नादे वंस जगत चेतै हैं । वचन वंस कामें कब ऐहैं ॥

कबीर वचन

सुनत वचन सतगुरु विहँसाये । धर्मदासकहँ विविधि समझाये॥
गर्गिन नाद वचन नहिं मानै । ताते विंद हम निरनय ठानै ॥
बिंद एक नाव बहुताई । बिंद मिले सो बिंद कहाई ॥
वचन वंस हैं पुरुषके अंसा । तिनके सदन छूटे जगहंसा ॥
नाद बिन्दु युगबन्ध जब होई । तबहीं काल रहै मुख गोई ॥
प्रथमैं जस हम तुमहिं बताना । नाद बिंद करयोग दिखाना॥
विना नाद नहिं विंद पसारा । विना विंदहिं नाद उबारा ॥
कलियुग काल कठिन है भाई । अहंरूप धरि सबको खाई ॥
नादे अहं त्याग कर होई । बिन्दे अहं बिन्द संजोई ॥
याते अंकुश पुरुष निरमाया । नाद बिन्द दोउ रूप बनाया॥

छाड़ि अहं भजिहैं सतरूपा । सो होइहैं हंस सरूपा ॥
नाद विंद कोई हो भाई । अहंभाव नहिं नीक बताई ॥
अहं करे सो भवमें डूबे । काल फांस पड़िहैं सो खूबे ॥
अहंभाव जब वंसहिं आवे । नादे बिन्दु भेद पड़ जावे ॥
बंस विरोध चले पुनि आगे । काल दबा सब पंथहि लागे॥

धर्मदास वचन

साहब विनती सुनो हमारी । तुम्हारी दया जीव निस्तारी॥
नाद विन्द कहँ रूप लखाया । तिनके तरनको भेद बताया॥
सकल जीव तुम लोकहिं जाई। दास नरायण काह कराई ॥
मोर पुत्र जग माहिं कहावे । ताते चिन्ता मोर मन आवे॥
भवसागरके जिव सब तरिहैं ।दासनरायण कालमुख परिहैं॥
यह तो भली होय नहिं बाता । सुनु बिनती सुखसागरदाता॥
ताकी मुक्ति करो तुम स्वामी ।यहि मोरविनती अन्तरयामी॥

कबीर वचन

बार बार धर्मनि समुझावा ।तुम्हरे हृदयप्रतीत न आवा ॥
चौदह यम तो लोक सिधावें ।जीवन फन्द कहो किन लावें॥
अब हम चीन्हा तुम्हारो ज्ञाना । जानि बूझि तुम भयो अजाना॥
पूरुष आज्ञा मेटन लागे । बिसरचो ज्ञान मोहमद जागे॥
मोह तिमि जब हिरदे छावे । बिसर ज्ञान तब काज नसावे॥
विन परतीत भक्ति नहिं होई । बिनु भक्ति जिव तरै न कोई॥
बहुरि काल फास तोहि लागा ।पुत्रमोह तब हिरदय जागा ॥
प्रतच्छ देखि सबे तुम लीना । दासनरायण काल अधीना॥
ताहू पर तुम पुनि हठ कीना । मोरवचन तुम एकु न चीन्हा॥
धर्मराज जो मोसन कहिया ।सोऊ ध्यान तबहृदयनरहिया॥
मोर प्रतीत तुम्हैं नहिं आवे । गुरुपरतीत जगत कसलावे ॥

आया छोड़ि मिले गुरु आई । सत सीढ़ीपर चढ़े सुभाई ॥
आया पकड़े मोह मद जागे । भक्ति ज्ञान सब तजे अभागे ॥
पुरुष अंश तुम जगमें आये । जीव चेतावन कार उठाये ॥
तुम्हहिं प्रतीत गुरुकर त्यागो । देखत दृष्टि मोह जगपागो ॥
और जीवका कौन ठिकाना । यह जो अहंकार सहिदाना ॥
जस तुम करहु सुनहु धर्मदासा । तस तुव वंस करै परकासा ॥
मोह आग सदा सो जरिहैं । वंस विरोध याहिते परिहैं ॥
सुत बिन नाम नारि परिवारा । कुलअभिमानसबकालपसारा ॥
इनमें तब परिवार भुलैहैं । सत्यनामको राह न पैहैं ॥
देखा देखी जीव फँसाई । देखत दूत मगन ह्वै जाई ॥
तबहिं दूत प्रबल ह्वै जैहै । धरि जीवनकहँ नरक पैठेहै ॥
कालफांस जब जीव फँसावे । काम मोहमदलोभ भुलावे ॥
गुरु परितीत तेहि नहिं रहई । सत्य नाम सुनते जिव दहई ॥
जाके घट सतनाम समाना । ताकर कहौं सुनो सहिदाना ॥
काल बात तेहि लागे नाहीं । कामक्रोध मद लोभ न ताहीं ॥
मोह तृष्णा दुर आश निवारै । सतगुरु वचन सदाचित धारै ॥

छन्द

जस भुवंगम मणिजुगावे असशिषगुरु आज्ञागहे ॥
सुत नारिसब विसराय विषया हंसहोयसतपदलहै ॥
गुरु वचन अटल अमान धर्मनि सहै विरलाशूरहो ॥
हंसहो सतपुर चले तेहि जीवन मुक्ति न दूरहो ८९ ॥
सो०-गुरु पद कीजै नेह, कर्म भर्म जञ्जाल तज ॥
निज तन जाने खेह, गुरुमुख शब्द विश्वास दृढ़ ९३ ॥

धर्मदास वचन

सुनत वचन धर्मदास सकाने। मनहीं माहिं बहुत पछताने॥
धाइ गिरे सत गुरुके पाई। हो अचेत प्रभु होहु सहाई॥
चूक हमारी बकसहु स्वामी। विनती मानहु अन्तरयामी॥
हम अज्ञान शब्द तुम टारा। विनय कीन्ह हम बारंबारा॥
अब मैं चरण तुम्हारे गयऊँ। जो संतनिकी विनती करऊँ॥
पिता जानि बालक हठ लावे।गुण औगुण चित ताहि न आवे॥
पतित उधारण नाम तुम्हारा। औगुण मोर न करहु विचारा॥

कबीर वचन

धर्मदास तुम पुरुषके अंशा। त्यागहु दास नारायण वंशा॥
हम तुम धर्मनि दूजा नाहीं। परखहु शब्द देखि हियमाहीं॥
तुम जो जीवकाज जग आऊ। भौसागर महँ पन्थ चलाऊ॥

धर्मदास वचन

हे प्रभु तुम सुख सागर दाता।मुझ किंकरको करचो सनाथा॥
जबलग हम तुमहीं नहिं चीन्हा।तब लग माता कालहर लीन्हा॥
जबते तुम आपन कर जाना। तबते मोहिं भयो दृढ ज्ञाना॥
अब नहिं दुनिया मोहि समायी। निश्चय गहीं चरण तुव धाई॥
तुम तजि मोहि आनकी आसा। तो मुहिं होय नरकमहँ वासा॥

सतगुरु वचन

धर्मदास धन मो कहँ चीन्हा।वचन हमार पुत्र तजि दीन्हा॥
जब शिष हृदय मुकुर मलताहीं। गुरू स्वरूप तबहीं दरसाहीं॥
जब सिखनिजहिय गुरुपद राखे। मेटे सबहिं कालकी साखे॥
जौं लगि सात पांचकी आसा। तौ लगि गुरु नहिं निरखे दासा॥
इक पत शिष्य गुरूपद लागे। छूटे मोह ज्ञान तब जागे॥
दीपक ज्ञान हृदय जब आवे। मोह भर्म तब सबै नशावे॥
उलटि आय सतगुरु कहँ हेरा। बुन्द सिन्धुका भयो निबेरा॥

सिन्धुहि बुन्द समाना जाई । कहे कबीर मिटी दुचिताई ॥
धर्मनि यह गुरु पद परतापा । गुरु पद गहि तज भ्रम दापा॥
यहै गहै सब दुःख नशायी । बिन गुरुशिष्य निरासे जायी॥
अब मैं तोहीं कहौं बुझाई । सुनि संशय तब दूर पराई ॥
दास नरायन तोरे मनि है । वह तो आपनमन निज तनिहै॥
ताकर पन्थ चले संसारा । यामहँ नहिं कछु सोच विचारा॥
अंश हमार जो पन्थ चलाई । ताहि देखि सो रार बढ़ाई ॥
ताकर चढ़ी देखि नहिं सहिहैं । आपन बढ़ी बंस मत कहिहैं॥
पन्थ चलाय हंग बहु आनै । आपन सब छोट बखानै ॥
साधुसंत सो कर अभिमाने । नाद पुत्र सो नहिं वह माने॥
जब लग ऐसी चाल चलावे । तब लग तो नहिं सतपथ पावे॥
वचन वंश और नाद कड़िहारा । इनसँग मिलै तो होय उबारा॥
छोड़ अहंकार मान बढ़ाई । सत्य शब्द जब हृदय धराई॥
वचन वंशको अंश कहे हैं । धर्मनि तबे मोर मन भे हैं ॥
जात तजे और मोह न आवे । सोई अंश वंश कहलावे ॥
कुलकी दशा जानकर खोवे । निश्चय अंश वंश वह होवे॥
तब तेही हम लेव उदारी । निश्चय कहहुँ नहिं संतलबारी॥
यहि विश्वास धर्मनि मन राखो । विनविश्वास वचन नहिं भाखो॥

गुरुमहिमा

कीन विश्वास जीव नहिं तरई । गुरुप्रतीतिविनु नर कहिं वरई ॥
गुरु सम और न दानी भाई । गुरु चरनन चित राखु समाई॥

छन्द

दानी और न दूसरा जग,गुरु मुक्तिदानी जानिया॥
अधम चाल छुड़ायके गुरु,ज्ञान अङ्ग लखानिया॥
हंसहि भक्ति दिढावहीं दे, अंक बीरा नाम हो ॥
दुष्ट मित्र चिन्हायके, पहुँचावहीं निज ठाम हो ॥९०॥

सोरठा–गुरू पुरुष नहिं आन, निश्चयकै जो मानहीं॥
ताहि मिलै सहिदान, मिटै कालकलेश सब॥९४॥

सर्गुण भाव पेखु धर्मदासा। कस दृढ गह प्रतीत विश्वासा॥
कर्मी जीवन देखु विचारी। कस दृढ गहे प्रतीत सम्हारी॥
आपहि लै आवै नर माटी। करता कहँ मूरति गढ ठाटी॥
तापर अक्षत पुहुप चढावे। प्रेत प्रतीत ध्यान मन लावे॥
करता कर थापे पुनि ताही। भंग प्रतीत होय नहिं जाही॥
जस धोखहु महुँ प्रेम समावे। सोई प्रेम सजिव बन आवे॥
सो जिव होय अमोल अपारा। साहिबको है हंस पियारा॥
उन जीवनको प्रेम बखाने। कैसे दृढ होय धोख लपटाने॥
गुरू नाम हम आप कहाया। गुरू पुरुष नहिं भिन्न बताया॥
अस जिव काल वस है रहई। दृढ प्रतीत कैगुरु नहिं गहई॥
सब मूरति परतीत न आवै। शून्य ध्यान धोखेहु मन लावै॥
जो निश्चय है गुरु प्रन धरहीं। मुक्ति होय टारे नहिं टरहीं॥
ऐसे करि जो विश्वास दृढ़ावै। गुरुतजिचित्त अनतनहिंलावै॥
यहि रहनीको हंस अमोला। प्रेम रंग जो रंगे चोला॥
प्रेम जानि हैं अमृत गिरागुरु। अँचवतहोतखानिदुरमतदुरु॥
धर्मदास हिय देखु विचारी। गुरुप्रतीत दिढ गहा सम्हारी॥

छन्द

अस कैप्रतीत दृढाय गुरुपद, नेह इस्थिर लाइये॥
गुरुज्ञानदीपक बार निजउर, मोहतिमिरनशाइये॥
गुरुपद पराग प्रतापतें अब, पुंज निश्चय जावई॥
और मध्ययुक्तिनतरनकी, विश्वास शब्द समावई॥९१॥

सो०-यह भव अगम अथाह, नाम प्रेमदृढके गहे॥
लेहकृपा गुरुथाह, गुरुगिरा कंडिहार मिले॥९५॥

धर्मदासवचन–गुरुशिष्यकी रहनी

धर्मदास विनती अनुसारे। तुम साहब हम दास तुम्हारे॥
चूक जो कछु पूछौं गुरुराया। सो कहिये करिकै अब दाया॥
गुरु शिषकी रहनी है जैसी। सो समुझाय कहो गुरु तैसी॥

गुरुमहिमा कबीर वचन

सतगुरु कहै गुरू व्रतधारी। अगुनसगुनबिचगुरुआधारी॥
गुरू बिना नहिं होय अचारा। गुरू विना नहिं होय भवपारा॥
शिष्य सीप गुरु स्वाती जानो। गुरुपारसशिष लोहसमानो॥
गुरु मलयागिर शिष्य भुजंगा। गुरुगुरूपरसिशीतलहोय अंगा॥
गुरु समुद्र है शिष्य तरंगा। गुरु दीपक है शिष्य पतंगा॥
शिष्यचकोरगुरुक्रोशशिजानो।गुरुपदरविकमलशिषविकसानो
यहि स्नेह शिष निश्चय लहई। गुरुपद परस दरश हिय गहई॥
जब शिषयाविधिध्यानबिशेखा। सोई शिष्य गुरूसम लेखा॥
गुरू गुरुनमें भेद विचारा। गुरुगुरु कहै सकल संसारा॥
गुरु सोई जिन शब्द लखाया। आवागमन रहित दिखलाया॥
गुरु सजीवन शब्द लखावे। जाके बल हंसा घर जावे॥
ता गुरुसों कछु अन्तर नाहीं। गुरु औशिष्यमताएकआहीं॥

छन्द

मन कर्म नाना भावना यह, जगतसबलपटानहो॥
जीवमयभ्रमजाल डारेउ, उलटिनिज नहिं जानहो॥
गुरु बहुत हैं संसारमें सब, फँदे कृत्रिम जाल हो॥
सतगुरु विना नहिं भ्रम मिटे, बड़ाप्रबलकालकरालहो९२

सो०–सतगुरुकी बलिहार, अजर सँदेसा जो कहै॥
ताही मिलेहोयन्यार, सतपुरुष जिवभेंटई॥९६॥

निशिदिन सुरत गुरू सो लावै। साधु सन्तके चितहि समावे॥
जिनपर दाया सतगुरु करै। तिनका फांस करम सब जरै॥
करनी करै औ सुरति लगावै। ताको लोक सतगुरु पहुँचावै॥
सेवाकरि मन राखे न आसा। ताका सतगुरु काटे फांसा॥
गुरुचरणन जो राखे ध्याना। अमर लोक वह करत पयाना॥
योगी योग साधना करई। विना गुरू सो भव नहिं तरई॥
शिष्य जो गुरु आज्ञा धारी। गुरुकी कृपा होय भवपारी॥
गुरु भगता जो जिव आही। साधुगुरू नहिं अन्तर ताही॥
सांचा गुरू ताहि कर माने। साधुगुरू नहिं अन्तर आने॥
जो स्वारथ पागे संसारी। नहिंगुरुशिष्य न साधु अचारी॥
तिनको काल फन्द तुम जानो। दूत अंस काल कर मानो॥
तिनते होय जीवकी हानी। यह तो अहे धर्म सहिदानी॥
जोई गुरू प्रेम गति जाने। सत्य शब्दको राह पिछाने॥
परम पुरुषकी भक्ति दिढावे। सुरति निरतिकरतहँ पहुँचावे॥
तासों प्रीति करै मन लाई। छोडै दुरमति और चतुराई॥
तबहीं निहसंशय घर पावै। भवतरिके जग बहुरि न आवै॥

छन्द

सत नाम अमी अमोल अविचल, अंकवीरापावई॥
तजि काग चालमरालमतिगहि, गुरुचरणलौलावई॥
और पंथ कुमारग सकल बहु, सो नहीं मनलावई॥
गुरु चरण प्रीति सुपंथ धर्मनि, हंसलोकसिधावई॥
सो०—गुरुपद कीजे नेह, कर्म भर्म जञ्जाल तजि॥
निज तन जाने खेह, गुरुमुखशब्दप्रतीतिकरि॥९७॥

धर्मदास वचन

धर्मदास हियबिच अतिहरषे। गदगद गिरा नयन जलबरषे॥

ममहियतिमिरआहिअँधियारा। मिहर पतंगकीन्ह उजियारा॥
पुनि धीरज धरि बोल विचारी।केहिविधिकरौंप्रभु स्तुति तुम्हारी
जब गुरु विनती सुनो हमारी। जीवन निरनय कहो विचारी॥
कौन जीव कहँ देहों पाना। समरथ कहो वचन सहिदाना॥

अधिकारी जीवनके लक्षण सद्गुरु वचन

धर्मदास निःसंशय रहहु। मुक्ति सँदेशा जीवन कहहू॥
देखहु जाहि दीन लौ लीना। भक्तिमुक्तिकह बहुतअधीना॥
दया शील क्षमा चित जाही। धर्मनि नाम पान दी ताही॥
तासन पुरुष सँदेशा कहिहो।निसदिननामध्यानदृढगहिहो॥
दयाहीन जो शब्द नहिं माने। कालदिशा हो बाद बखाने॥
चञ्चल[१] दृष्टि होय पुनि जाही। सत्य शब्द न ताहि समाही॥
चिबुक बाहर दशन लिखाये। जानहु दूत भेष धरि आये॥
मध्यनेत्र जिहितिल अनुमाना। निश्चय कालरूप तिहिजाना॥
ओछा शीश दीर्घ जिहि काया। ताके हृदय कपट रह छाया॥
तेहि जनि देहु पुरुष सहिदानी। यह जिव करे पंथकी हानी॥

काया कमल विचार। धर्मदास वचन

हे प्रभु जन्म सुफल मम कीन्हा। यमसों छोरि अपनकरलीन्हा॥
जो सहस्र रसना मुख होई। तो तव गुण वरणे नहिं कोई॥
हे प्रभु हम बड़ भागी आहीं।निज सम भाग कहों मैं काहीं॥
सोइ जीव बड़ भागी होई। जासु हृदय तव नाम समोई॥
अब इक विनती सुनो हमारी। यहि तन निर्णय कहो विचारी॥
कौन देव कहँ कहवाँ रहई। कहवाँ रहि कारज सो करई॥
नाडी रोम रुधिर कत अहई। कौने मारग स्वासा बहई॥
आँत पित्त औ फेफसा झोरी। साहब कहहु विचार बहोरी॥

---

१ यह दोनों चौपाई किसी भी पुराने ग्रन्थोंमें नहीं है।

जाहि ठाम है जासु अस्थाना । साहब बरनि कहो सहिदाना ॥
कौनकमलकेता जप परगासा । रात दिवसलग केतिकस्वासा ॥
कहवाँते शब्द उठि आवे । कहो कहवाँ वह जाइ समावे ॥
कोइजीव झिलमिल कहँ देखा । सौसाहिबमोहि कहो विवेका ॥
कौन देवके दरशन पाई । तिहि अस्थान कहो समुझाई ॥

सद्गुरु बचन

धर्मनि सुनहु शरीर विचारा । पुरुष नाम कायाते न्यारा ॥
प्रथमहि मूलकमल दल चारी । तहँ रहु देव गणेश पसारी ॥
विद्या गुण दायक तेहि कहिये । षटशतअजपाध्यानसोलहिये ॥
मूल कमलके उर्ध अखारा । षट पखुरीको कमल बिचारा ॥
ब्रह्मा सावित्री सुर राजे । षटसहस्र अजपा तहँ गाजे ॥
पदुम अष्टदल नाभि स्थाना । हरिलक्ष्मीतहँ बसहिं प्रधाना ॥
जाय जहां षटसहस्र प्रमाना । गुरुगमते लखि परइ ठिकाना ॥
ता ऊपर पंकज दल द्वादश । रूद्र पारवती ताहि कमलबस ॥
षट सहस्र अजपा तहँ होई । गुरुगम ज्ञानते देखु बिलोई ॥
षोडश पत्र कमल जिव रहई । सहस एक अजपा तहँ चहई ॥
भवर गुदाफल दोइ परमाना । तहवां मन राजाको थाना ॥
सहस एक अजपा तेह ठाई । धरमदास परखो चितलाई ॥
सुरति कमल सतगुरुके वासा । तहँएतिक अजपा परकाशा ॥
एक सहस षटशत औ बीसा । परखहु धर्मनि हंसन ईसा ॥
दोइदल उर्ध्व शून्य अस्थाना । झिलमिलज्योतिनिरंजन जाना
धर्मदास सुनु शब्द सँदेशा । घट परचेका कहुँ उपदेशा ॥
अब पुनि सुनहु शरीर विचारा । एक नाम गहि धरहु करारा ॥
सबै कुम्भ तन रूधिर सँवारा । कोट रोम तन पृथी सुधारा ॥
नाडि बहत्तर हैं परधाना । नौपहँ तीन प्रजान सुधाना ॥

त्रय नाडी महँ एक अनूपा । सो ले रहे गहे सतरूपा ॥
जेतिक पत्र पदुम जो आही । उठे शब्द प्रगटे गुण ताही ॥
तहँवाते पुनि शब्द उठायी । शुन्यमाहिंसो जाय समायी॥
आंत एकइस हाथ प्रमाना । सवा हाथ झोरी अनुमाना ॥
सवा हाथ नभ फेरी कहिये । खिरकी सात गुफामें लहिये॥
छंद-पित्त अंगुली तीन जानों पांच अंगुल दिलकही
सात अंगुल फेफसा है सिंधु सात तहाँ रही ॥
पवन धार निवार तनसो साधु योगी गम लहे ॥
यहिकर्मयोगकियेरहितनाहिं भगति बिनुजोइनबहे ९४
सो०-ज्ञानयोगसुखराशि,नाम लहे निज घर चले॥
अरिपरबलको नाशि, जीवनमुकता होय रहे ॥९८॥
धर्मनि यह मनको व्यवहारा । गुरु गमते परखो मत सारा ॥
मनुआ शून्य ज्योतिदिखलावे। नाना भर्म मनहिं उपजावे ॥
निराकार मन उपजा भाई । मनकी मांड तिहूँ पुर छाई॥
अनेक ठाव जिव माथ नवावे । आप न चीन्हे धोखा पावे॥
यह सब देखु निरंजन आसा । सत्य नाम विन मिटे न फांसा॥
जैसे नट मर्कट दुख देई । नाना नाच नचावन लेई ॥
यहिविधियह मन जीव नचावे । कर्म भर्म भव फंद दिढावे ॥
सत्य शब्द मन देइ ऊछेदी । मन चीन्हे कोइ बिरले भेदी॥
पुरुष सँदेश सुनत मन दहई । आपनि दिशा जीव ले बहई॥
सुनु धर्मनि मनके व्यवहारा । मनको चीन्ह गहे पदसारा ॥
या तन भीतर और न कोई । मन अरु जीव रहे घर दोई॥
पांच पचीस तीन मन झेला । ये सब आदि निरंजन चेला॥
पुरुष अंश जिव आनसमाना। सुधिभूलीनिजघर सहिदाना॥
इन सब मिलिके जीवही घेरा । बिनपरिचयजिवयमका चेरा॥

भर्म वशी जिव आप न जाना। जस सुगवा नलनी फँदाना ॥
जिमि केहरि छाया जल देखे। निजछाया दुतिया वह लेखे॥
धाय परे जल प्राण गँवावे। अस जिव धोखा चीन्ह न पावे॥
कांच महल जिमि भूके स्वाना। निज अकार दुतिया करजाना॥
दुतिया अवाज उठे तहँ भाई। भूँकत स्वान लेहु लखि धाई ॥
ऐसे यम जिव धोख लगाई। ग्रासे काल तबै पछताई ॥
सतगुरु शब्द प्रीति नहिं करई। ताते जीव नष्ट सब परई ॥
किरतम नाम निरंजन साखा। आदिनाम सतगुरु अभिलाखा
सतगुरु चरण प्रीति न करई। सतगुरु मिल निजघरसंचरई॥
धर्मदास जिव भये बिगाना। धोखे सुधा गरल लपटाना ॥
अस कै फन्द रच्यो धर्मराई। धोखा वसि जिव परे भुलाई॥
और सुनो मन कर्म पसारा। चीन्हि दुष्टजिव होय नियारा॥

छंद—चीन्ह है रहे भिन्न धर्मान,शब्द ममदीपकलहे॥
यह भिन्न भाव दिखात तोकहँ,देखजिवयमना गहे ॥
जौलों गढपति जगे नाहिं, सधि पावत तस्करा ॥
रहत गाफिल भर्मके वशि,तहाँ तस्कर संचरा॥९५॥

सो०-जाग्रत कला अनूप, ताहि काल पावे नहीं॥
भर्म तिमिर अधकूप,छलयमराजीवनग्रसे॥९६॥

मनके पाप पुण्यका विचार

मनको अंग सुनो जन सूरा। चोर साहु परखो गुरु पूरा ॥
मनही आही काल कराला। जीव नचावे करे बिहाला ॥
सुन्दर नार दृष्टि जब आवे। मन उमगे तन काम सतावे ॥
भये जोर मन ले तेहि धावे। ज्ञानहीन जिव भटका खावे॥
नारि भोग इन्द्री रस लीन्हा। ताकर पाप जीव सिर दीन्हा॥

द्रव्य पराइ देख मन हरषा । कहेलेब अस व्यापेउ तिरषा॥
द्रव्य पराइ आन सो आने । ताके पाप जीव लै साने ॥
कर्म कमावे या मन बोरा । शासत सहे जीव मतिभोरा॥
पर निंदा पर द्रव्य गिरासी । सोसब देखहु मनकर फांसी॥
संत द्रोह अरु गुरुकी निंदा । यह मन कर्म कालमति फँदा॥
गृही होय पर नारिन जोवै । यह मन अंधकर्म विष बोवै ॥
जीव घात मन उमँग करावे । तासु पाप जिव नर्क भुगावे॥
तीरथ व्रत अरु देवी देवा । यह मन धोख लगावे सेवा ॥
दाग द्वारका मनहिं दिखावे । दाग दिवाय मनहिं बिगरावे॥
एक जनम राजाको होई । बहुरि नरकमें भुगते सोई ॥
बहुरि होय सांडकर औतारा । बहु गाइनको होय भरतारा ॥
कर्म योग है मनको फँदा । होय निहकर्म मिटै दुख द्वंदा॥
छंद-सुनो धर्मनि मन भावनाकहँलोंकहौंनरबारके ॥
त्रय देव तेतिस कोटि फंदे शेष सुर रहे हारके ॥
सतगुरुविना कोइ लख न पावे पड़े कृत्रिम जालहो॥
विरलासंत विवेककरीचीन्हिछोड्यो कालहो॥९६॥
सो०-सतगुरुके विश्वास, जन्म मरण भय नाशइ ॥
धर्मनि सो निजदास, सत्यनाम जो दृढगहै॥१०॥

निरंजन चरित्र

धर्म चरित्र सुनो धर्मदासा । छलबुधिकरनजीवनतिनफांसा
धरि औतार कथा तिन गीता । अंध जीव कोई गम्यन कीता॥
अर्जुन सेवक अति लौलीना । तासों ज्ञान कह्यो सब भीना॥
ज्ञान प्रवृत्ति निवृत्ति सुनावा । तज निवृत्ति परवृत्ति दृढावा॥
दया क्षमा प्रथमैं तिन भाषा । ज्ञान विज्ञान कर्म अभिलाषा॥
अर्जुन सत्य भक्ति लवलीना । कृष्ण देवसों बहुत अधीना॥

प्रथम कृष्ण दीन्ही तेहि आशा। पीछे दीन्ह नर्कमें बासा ॥
ज्ञान योग तजि कर्म दृढाया। कर्म वशी अर्जुन दुख पाया ॥
मीठ दिखाय दियो विष पाछे। जिव बटपार संतछबि काछे ॥

छन्द

कहँलों कहों छनव्हि यमके संत कोइ कोइ परखिहैं ॥
ज्ञान मारग दृढ रहिे तब सत्य मारग सूझि हैं ॥
चीन्हि हैं यम छलमता तब चीन्हि न्यारा तो रहे ॥
सतगुरुशरणयमत्रासनाशैं अटलसुख आनंद लहे ॥ ९७ ॥
सो०-हंसराज धर्मदास, तुम सतगुरु महिमा लहो ॥
करहुँ पथ परकास, अजरसंदेशा तोहि दियो १०१

मुक्तिमारग पन्थसहिदानी वर्णन धर्मदास बचन

हे प्रभु तुम सतपुरुष दयाला। वचन तुम्हारा अमितरसाला ॥
मनको रहन जाति हम पावा। धन सत गुरु तुम आन जगावा ॥
अब भाषो प्रभु आपन डोरी। केहि रहनी जम तिनका तोरी ॥

सद्गुरुवचन

धर्मदास सुनु पुरुष प्रभाऊ। पुरुषडोरितोहि अबहि चिन्हाऊ
पुरुष शक्ति जब आय समाई। तब नहिं रोके काल कसाई ॥
पुरुष शक्ति सुन षोडश आहीं। शक्ति संग जिवलोकहि जाहीं ॥
बिना शक्ति नहिं पन्थ चलाई। शक्तिहीन जिव भौ अरुझाई ॥
ज्ञान विवेक सत्य सन्तोषा। प्रेम भाव धीरज निरघोषा ॥
दया क्षमा अरुशीलनिःकरमा। त्यागवैराग शांतिनिजधरमा ॥
करुणा करि निज जीव उबारे। मित्रसमान सबको चित धारे ॥
इन मिलि लहे लोके विश्रामा। जले पंथ निरखी जेहि धामा ॥
गुरु सेवा गुरुपदे परतीती। जेहि उर बसे चले जम जीती ॥
आतम पूजा सन्त समागम। महिमासंत कहइ निगमागम ॥

गुरु सम संतभक्ति औराधे । ममता मोह क्रोध गुण साधे॥
अमृत वृक्ष पुरुष सतनामा ।पुरुषसखासतअविचलधामा॥
यह सब डोरी पुरुषको आही ।सत्यनामगहिसत्यपुर जाही॥
चक्षु हीन घर जाय न प्रानी । यह सब कहेउ पंथ सहिदानी॥
पुरुष नाम चक्षु परवाना । लहै जीव तब जाय ठिकाना॥
दिढ परतीति गहे गुरुचरना । मिटे तासु जनम औ मरना॥

पन्थकी रहनी धर्मदास वचन

हे प्रभु तुम सतपुरुष दयाला । वचन तुम्हार अमानरिसाला॥
अब बरनो प्रभु पंथनिजदासा ।विरक्तगिरहीकहँरहनिपरगासा॥
कौन रहनि वैराग कमावे । कौन रहनि गेही गुन गावे॥

सद्गुरु वचन

धर्मदास सुन शब्द संदेशा । जीवन कहौ मुक्ति उपदेशा॥
वैरागी वैराग दिढै हो । गेही भाव भक्ति समझै हो॥

वैरागी विरक्त लक्षण

वैरागी अस चाल बताऊ । तजे अखज तब हंस कहाऊ॥
प्रेम भक्ति आने उरमाहीं । द्रोह घात दिगचितवे नाहीं॥
जीव दया राखे हिय माहीं । मनवच कर्मघात कोउ नाहीं॥
लेवे पान मुक्तिकी छापा । जाते मिटे कर्म भ्रम आपा॥
हंस दशा धरि पन्थ चलावे । श्रवणी कंठी तिलक लगावे॥
रूखा फीका करे अहारा । निसदिन सुमिरे नाम हमारा॥
औ पुनि लेह तुम्हारो नामा । पठवों ताहि अमरपुरधामा॥
कर्म भर्म सब देह बहाही । सार शब्दमें रहे समायी॥

---

१ शरीरके पोषणमें जिनका काम नहीं पड़ता है उसे अखज अर्थात् उसको अभक्ष कहते हैं, जैसे तम्बाकू गांजा, भंग शराब मांस तथा लहसुन प्याज इत्यादि तमोगुणी पदार्थ जिससे बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। इसी लिये सद्गुरुका वचन है। "जैसा खाइये, तैसी उपजै बुद्धि। जाको जैसा गुरु मिला ताको तैसी शुद्धि॥"

नारि न परसे बिन्द न खोवे । क्रोध कपट सब दिलसे धोवे॥
नरक खान नारी कहँ त्यागे । इक चित होय शब्द गुरु लागे॥
क्रोध कपट सब देइ बहाई । क्षमा गंगमें पैठि नहाई ॥
विहँसतबदनभजनको आगर । शीतल दशा प्रेम सुखसागर॥
रहै अजांच न जांचै काहू । का परजाका राजा साहू ॥
पच्छिम लहर जगावै जानी । अजपाजाप भजन धुन ठानी॥
रहित रहै बहै नहिं कबहीं । सो वैरागी पावै हमहीं ॥
हमहिं मिलै दमहीं अस होई । दुबिधा भाव मिटावै सोई ॥
गुरु चरणनमें रहै समाई । तजि भ्रम और कपट चतुराई॥
गुरु आज्ञा जो निरखत रहई । ताकर खूट काल नहिं गहई ॥
गुरु प्रतीत दृढके चित राखे । मोहि सम न गुरू कहं भाखे॥
गुरु सेवामें सब फल जावै । गुरू विमुख नर पार न पावै॥
जैसे चन्द्र कुमोदिनि रीती । गहे शिष्य अस गुरुपरतीती ॥
ऐसी रहनि रहै बैरागी । जेहि गुरु प्रीति सोई अनुरागी॥

गृहीलक्षण

गेही भक्ति सुनहु धर्मदासा । जेहि लै गेही परै न फांसा ॥
काग दशा सब देइ बहाई । जीव दया दिल रखे समाई॥
मीन मांस मद निकट न जाई। अंकुर[1] भक्ष सो सदा कहाई॥
लेवे पान मुक्ति सहि दानी । जाते काल न रोकै आनी ॥
कण्ठी तिलक साधुको बाना।गुरुमुख शब्द प्रीति उर आना॥

---

१ प्रायः लोग अकुंरजकी आड़ लेकर तम्बाकूगांजाभंग चरस आदि तमो—गुणीनशेले पदार्थोंको भक्षण करते जाते हैं और जब कभी उन्हें समझाओ तो अंकुर भच्छे सो मानवा, कहकर कन्नी काट, जाते हैं और यह नहीं समझते "कि" फेर शरा नहीं अंगम, नहीं इन्द्रिनके माहिं । फेर परा कछु बुझायो सो निरबारेउ नाहिं ॥ जो सद्गुरुने कहा है सो इन पदार्थोंके सेवनसे बुद्धि नाश होकर सत्यकी सूझ होना अत्यन्त कठिन है, विशेष देखो—"कबीरधर्म दर्शनमें"

प्रेम भाव सन्तनसो राखे । सेवा सत्य भक्तिचित राखे॥
गुरु सेवा पर सर्वस वारे । सेवा भक्ति गुरूकी धारे ॥
सुमिरण जो गुरु देह दृढाई । मन वच करमसों सुमरे भाई॥

छन्द

पुरुष डोरि सुनहु धर्मनि जाहि ते गेही तरे ॥
चक्षु बिन घर जाय नाहीं कौन विधि ताकर करे॥
वंश अंश है चक्षु धर्मनि जीव सब चेतावहू ॥
विश्वास कर मन वचनको तब जरामरण नशावहू॥
सो०-शब्द गहे परतीत, पुरुषनामअहिनिशिजप ॥
चलेसो भवजलजीति,अंकनामजिन पाइया १०२॥

आरतीमाहात्म्य

गेही भक्त आरती आने । प्रति अमावस आरती ठाने॥
अमावम आरती नहिं होई । ताहि भवन रह काल समोई॥
पाख दिवस नहिं होवे साजू । प्रति पूनो कर आरती काजू॥
पूनो पान लेई धर्मदासा । पावे शिष्य होय सुख बासा ॥
चन्द्र कला षोडस पुर आवे । ताहि समय परवाना पावे ॥
यथा शक्ति सेवा सहिदाना । हंसा पहुँचे लोक ठिकाना ॥

धर्मराय वचन

धर्मदास विनती अनुसारा ।अस भाखो जिव होय उबारा॥
कलऊ जीव रंक बहु होई । ताकर निर्णय भाखौं सोई ॥
सकलो जीव तुम्हारे देवा । कैसे कहो करें सब सेवा ॥
सब जिव आदि पुरुषके अंशा । भाषहु वचन मिटे जिव संशा॥

सद्गुरु वचन

धर्मनि सुनो रंक परभाऊ । छठे मास आरति लौलाऊ ॥
छठे मास नहिं आरति भेवा । वर्ष माहिं गुरु चौका सेवा ॥

सम्बत माहि चूक जो जायी । तबै संत साकट ठ राही ॥
सम्बत मांहि आरती करई । ताकर जीव धोख ना परई ॥
नाम कबीर जपे लौ लाई । तुमरो नाम कहे गुहराई ॥
करत अखंडित गुरुपद गहई । गुरुपदप्रीति दोइ निस्तरई ॥
ऐसी रहनि गोहि जो धरहैं । गुरू प्रताप दो निस्तरिहैं ॥
ऐसो धारण गेहि जो करहैं । गुरू प्रताप लोक संचरहैं ॥

छन्द

बैरागिगेहिदोउकहँ धर्मनि रहनि गहनि चितायहू॥
निज निज रहनी होउतरि हैं शब्द अंग सुनायहू॥
निपट अतिविकराल अगमअथाहभवसागर अहै ॥
नामनौकागहे दृढकरिछोरे भवनिधि तब अहै॥९९॥
सो०—केवटते कर प्रीति, जो भवपार उतारई ॥
चले सो भव जलजीति, जबसतगुरु केवट मिले१०३

असावधानीका फल

जब लग तनमें हंस रहाई । निरखे शब्द पन्थ चले भाई॥
जैसे शूर खेत रह मांडी । जो भागे तो होवे भांडी ॥
सन्त खेत गुरु शब्द अमोला । यम तेहि गहे जीव जो डोला॥
गुरू विमुख जिव कतहुँ न बांचै । अगिन कुंडमहँ जरि बरि नाचे॥
सासति होय अनेकन भाई । जनम जनम सो नर्कहि जाई॥
कोटि जन्म विषधर सो पावे । विष ज्वालासहि जन्म गमावे॥
विष्ठा माहीं क्रिमि तनु धरई । कोटि जन्मलों नर्कहिं परई ॥
कहा कहों सासति जिवकेरा । गुरुमुख शब्द गहो दिढ़ बेरा॥
गुरू दयाल तो पुरुष दयाला । जेहि गुरुव्रत छुए नहिं काला॥
जीव कहो परमारथ जानी । जो गुरुभक्त ताहि नहिं हानी॥

१ किनारा

कोटिक योग अराधे प्रानी । सतगुरु विना जीवकी हानी ॥
सतगुरु अगम गम्य बतलावे । जाकी गम्य वेद नहिं पावे ॥
वेद जाहि ते ताहि बखाने । सत्य पुरुषका मर्म न जाने॥
कोइ इक हंस विवेकी होवे । सत्य शब्द जो गही बिलोवे॥
कोटि माहिं कोई संत विवेकी । जो मम बानी गहे परेखी ॥
फन्दे सबै निरञ्जन फन्दा । उलटि न निजघर चीन्हे मंदा ॥

सावधानी—कोयलका दृष्टान्त

सुनो सुभाव कोइल सुत केरा । समुझि तासु गुण करो निबेरा॥
कोइल चित चातुर मृदुबानी । वैरी तासु काग अघखानी ॥
ताके गृह तिन अण्डा धरिया । दुष्टमित्रइक समचित करिया ॥
सखा जानि कागा तेहि पाला । जोगवे अण्ड काग बुधिकाला ॥
पुष्ट भये अण्डा विहराना । कुछ दिनगत भो चक्षु सुजाना ॥
पक्ष पुष्ट पुन ताकर भयेऊ । कोयल शब्द सुनावन लयेऊ॥
सुनत शब्द कोयल सुत जागा । निजकुल वचन ताहि प्रिय लागा
काग जाय पुनि जबहिं चरावे । तब कोइल तिहि शब्द सुनावे ॥
निजअंकुर कोइलसुत जहिया । वायस दिशाहिये नहिं रहिया ॥
एक दिवस वायस दिखलायी । कोइल सुत उड़चला परायी ॥
निज बोली बोलत चलुबाला । धाये वायस विकल विहाला ॥
धावत थकित भई नहिं पाई । बहुरि मुरछित भवन फिरि आई॥
कोयलसुत मिलिया परिवारा । वायस काग मुरछि झखमारा॥

छन्द

निजवचनबोलतसुतचला, तबधायमिलापरिवारही ॥
धाय वायस विकल है भयो थकितजबनहिं पावही॥
काग मूर्छित भवन आयो मनहि मन पछितायके ॥
कोइलसुतमिल्यो तात अपने कागरह्योझखमारिके १०॥

सो०-जसकोयलसुतहोय, यहिविधिमोकहँजीवमिले
निजघर पहुँचे सोय, वंश इकोत्तरतारउ ॥१०४॥

कोयल सुन जस शूरा होई । यहि विधि धाय मिलै मुहिं कोई॥
निज घर सुरति करैजो हंसा । तारों ताहि एकोत्तर बंसा ॥

हंस लक्षण

काग गवन बुधि छाँड़हु भाई । हंस दशा धरि लोकहि जाई॥
बोले काग न काहू भावे । कोइल वचन सबै सुख पावे॥
अस हंसा बोले विलछानी । प्रेम सुधा सम गहु गुरुबानी॥
काहू कुटिल वचन नहिं कहिये । शीतल दशा आप गहि रहिये॥
जो कोई क्रोध अनल सम आवे । आप अम्बु है तपन बुझावे॥
ज्ञान अज्ञानकी यहि सहिदानी । कुटिल कठोर कुमति अज्ञानी॥
प्रेम भाव शीतल गुरु ज्ञानी । सत्य विवेक सन्तोष समानी॥

ज्ञानीका लक्षण

ज्ञानीसोइ जो कुबुद्धि नशावे । मनका अंग चीन्ह विसरावे ॥
ज्ञानी होय कहै कटु बानी । सो ज्ञानी अज्ञान बखानी ॥
शूर काछ काछे जो प्रानी । सन्मुख मरे सुजस तब जानी॥
तेहिविधिज्ञानविचारमयआनी । ता कहँ कहू जान सहिदानी ॥
मूरख हिये कर्म ना सुझे । सार शब्द नहिं गुरु कहँ बूझे॥
चक्षु हीन पग विष्ठा परई । हांसी तासु कोइ नहिं करई ॥
दृगन अछत पग धरै कुठाई । ता कहँ दोष देइ नर आई ॥
धर्मदास अस ज्ञान अज्ञाना । परखे सत्य शब्द गुरु ध्याना॥
सर्व माहँ है आप निवासा । कहीं गुप्त कहिं प्रगट प्रगासा॥
सबसे नमन अंश निज जानी । गही रहै गुरु भक्ति निशानी॥

छन्द

रंग काचा कारणें प्रहलाद, कस दृढ है रह्यो ॥

यद्यपि तेहि बहु कष्ट दीन्हों,अडिग हो हरिगुणगह्यो
अस धरन धरि सतगुरुगहे, तब हंस होय अमोलहो॥
अमरलोक निवास पावे, अटलहोय अडोलहो १०१॥

परमार्थ वर्णन

सो०–भर्म तजे यम जाल, सत नाम लौलावई ॥
चलेसत्तकी चाल, परमारथचित दै गहे ॥१०५॥

परमार्थी गऊका दृष्टान्त

गऊको जानु परमार्थ खानी । गऊ चाल गुण परखहु ज्ञानी॥
आपन चरे तृण उद्याना । अँचवे जल दे क्षीर निदाना॥
तासु क्षीर घृत देव अघाहीं । गौ सुत परके पोषक आहीं॥
विष्ठा तासु काज नर आवे । नर अघ कर्मी जन्म गमावे॥
टीका पुरे तब गौ तन नासा । नर राक्षस तनले तेहि ग्रासा॥
चाम तासु तन अति सुखदाई। एतिक गुण इक गोतन भाई॥

परमार्थी सन्त लक्षण

गौ सम सन्त गहै यह बानी । तो नहिं काल करै जिवहानी॥
नरतन लहि अस बुद्धी होई । सतगुरु मिले अमरह्वै सोई ॥
सुनि धर्मनि परमारथ बानी । परमारथते होय न हानी ॥
पद परमारथ सन्त अधारा । गुरुसम लेई सो उतरे पारा॥
सत्य शब्दको परिचय पावै । परमारथ पद लोक सिधावै॥
सेवा करे विसारे आपा । आपा पाथ अधिक संतापा॥
यह नर अस चातुर बुधिमाना। गुन सुभ कर्म कहै हम ठाना ॥
ऊँच क्रिया आपन सिर लीन्हा। औगुण करे कहे करि कीन्हा॥
तात होय शुभ कर्म विनाशा । धर्मदास पद गहो निराशा॥
आशा एक नामकी राखे । निज शुभकर्म प्रगट नहिं भाखे॥

गुरुपद रहे सदा लौ लीना । जैसे जलहि न विसरत मीना॥
गुरुके शब्द सदा लौ लावे । सत्यनाम निशदिन गुणगावे॥
जैसे जलहि न विसरे मीना । ऐसे शब्द गहे परवीना ॥
पुरुष नामको अस परभाऊ । हंसा बहुरि न जगमहँ आऊ॥
निश्चय जायपुरुषके पासा । कूर्मकला परखहु धर्मदासा ॥

छन्द

जिमिकमठबाल स्वभाय तिमि मम हंसनिघरधावई ॥
यमदूत हो बलहीन देखत, हंस निकट न आवई ॥
हंस निर्भय निडर गाजई, सत्य नाम उच्चारई ॥
हंस मिल परिवार निज, यमदूत सब झकमारई ॥१०२॥
सो०-आनंदधाम अमोल, हंसतहांसुखबिलसहीं ॥
हंसहि हंसकलोल, पुरुषकान्ति छवि निरखहीं १०॥

ग्रन्थकी समाप्ति छन्द

अनुरागसागरग्रन्थकथितोहि, अगमगम्य लखाइया ॥
पुरुषलीला कालको छल, सब बरणि सुनाइया ॥
रहनि गहनि विवेक बानी, जौंहरी जन बूझि हैं ॥
परखि बानीजो गहे, तेहि अगममारगसूझिहैं॥१०३॥

ग्रन्थका सार निचोड़

सो०-सतगुरुपद परतीति, निश्चयनाम सुभक्तिदृढ ॥
संतसतीकी रीति पिय कारण निजतन दहै॥१०७॥
सतगुरु पीय अमान, अजर अमर विनशै नहीं ॥
कह्यो शब्द परमान, गहे अमर सो अमरहो ॥१०८॥

सन्त धरे तिहि आस, गहे जीव अमरहिं तहाँ ॥
चितचेतो धर्मदास,सतगुरु चरणन लीनरहु॥१०९॥
मन अलि कमल बसाव,सतगुरु पदपंकज रुचिर ॥
गुरुचरणन चितलाव,इस्थिरघरतबहीं मिले ॥११०॥
शब्द सुरतिका मेल, शब्द मिले संतपुर चले ॥
बुन्द सिंधुका खेल, मिले तो दूजा को कहे॥१११॥
शब्द सुरतिका खेल, सतगुरु मिले लखावई ॥
सिंधुबुन्दको मेल, मिले तो दूजा को कहैं ॥११२॥
मनकी दशा बिहाय, गुरु मारग निरखत चले ॥
हंस लोक कह जाय,सुखसागर सुख सो लहै११३॥
बुन्द जीव अनुमान, सिंधु नाम सतगुरु सही ॥
कहै कबीर प्रमान, धरमदास तुम बूझहू ॥ ११४ ॥

इतिश्री भूतपूर्व कबीरनगर स्थित–रसीदपुर शिवहरवाले वंशप्रतापी महंत स्वामी श्रीयुगलानन्द बिहारी हाल कबीराश्रम (खरसिया) निवासी कबीराश्रमाचार्य परमार्थी वैद्य आत्मनिष्ठ भारत पथिक कबीरपंथी ग्रन्थोंके एकमात्र जीर्णोद्धारक स्वामी श्रीयुगलानन्दबिहारी द्वारा संगृहीत

अनुरागसागर समाप्त